स्तोत्र संग्रह

• सुप्रभात स्तोत्र • दर्शन स्तुति • गुरु स्तुति • जिन स्तुति • भक्तामर स्तोत्र
• एकीभाव स्तोत्र • विषापहार स्तोत्र • कल्याण मंदिर स्तोत्र • तीर्थंकर स्तोत्र
• जिनवर स्तोत्र • अकलंक स्तोत्र • समाधि भक्ति

पद्यानुवाद

सारस्वत कवि श्रमणाचार्य

श्री विभवसागरजी महाराज

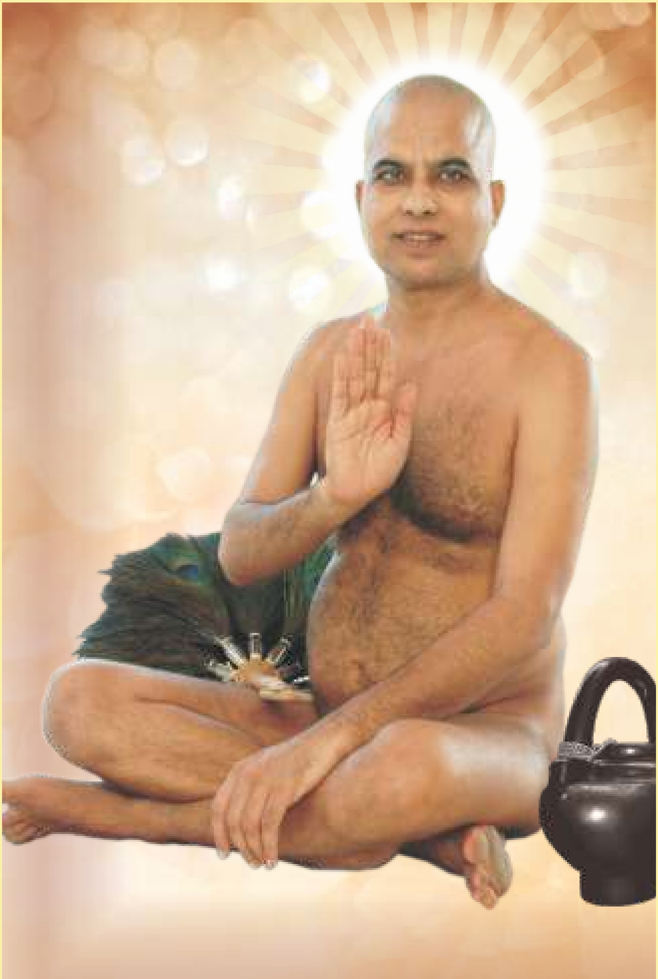

परम पूज्य गणाचार्य श्री 108 विरागसागरजी महाराज

स्तोत्र संग्रह

• सुप्रभात स्तोत्र • दर्शन स्तुति • गुरु स्तुति • जिन स्तुति • भक्तामर स्तोत्र
• एकीभाव स्तोत्र • विषापहार स्तोत्र • कल्याण मंदिर स्तोत्र • तीर्थंकर स्तोत्र
• जिनवर स्तोत्र • अकलंक स्तोत्र • समाधि भक्ति

पद्यानुवाद
सारस्वत कवि श्रमणाचार्य
श्री विभवसागरजी महाराज

कृति : स्तोत्र संग्रह

पद्यानुवाद : सारस्वत कवि श्रमणाचार्य विभवसागर जी मुनिराज

संकलन : ब्र. प्रिया दीदी

प्रकाशन : वर्षायोग कोतमा 2016

प्रसंग : संघ सहित सम्मेद शिखर जी
वंदना के उपलक्ष्य में

पुण्यार्जक एवं प्राप्ति स्थल : सन्मति–मीना जैन
जैन चश्मा घर, परकोटा, वनवे रोड,
सागर (म.प्र.) 9425462997
श्रीमती मीना जैन
(प्रा. कोर्डीनेटर अखिल भारतवर्षीय महिला परिषद, सागर)
मो. : 7746021008

प्रतिष्ठान : जैन चश्मा घर, सागर
गिरनार ऑप्टिक्स, सागर
वीर प्रिंटिंग प्रेस, अशोक नगर

मुद्रक : वीर प्रिंटिंग प्रेस,
सुभाषगंज, अशोक नगर (म.प्र.)
मो. : 8989456097

प्रस्तावना

श्रमणाचार्य विभव सागर मुनि

प्रस्तुत कृति ''स्तोत्र शास्त्र'' राष्ट्रभाषा में अनुदित, अनुवादित, मौलिक भक्तिमयी रचनाओं की प्रस्तुति है।

प्रत्येक जीव शान्ति चाहता है। वह शान्ति जिन माध्यमों से प्रकट होती है, उनमें सत् साहित्य का अनिर्वचनीय महत्वपूर्ण स्थान है। संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन में संत, साहित्य, तत्त्व और पुरातत्त्व का होना आवश्यक है।

विशुद्ध मनस्वी एवं निष्काम तपस्वी साहित्य साधकों के द्वारा जो रचा जाता है वह स्वच्छ दीवार पर अंकित सुचित्र की तरह जयवंत होता है। जिनशासन के यशप्राण आचार्य श्री मानतुंग की अमर रचना भक्तामर स्तोत्र तो इसका जीवंत उदाहरण है। जबकि अन्य आचार्यों की रचनायें भी इसी माला में गुम्फित हैं। ''साहित्य महोदधि'' डॉ. गणाचार्य श्री विरागसागर जी मेरे दीक्षा गुरुवर तो शान्त रस की चैतन्य मूर्ति हैं, मैं तो उस मूर्ति का दर्शक और उपासक मात्र हूँ।

काव्य जगत में शान्त रस को रसराज रस कहा जाता है। शान्त रस ही साहित्य की परमोत्कृष्ट सीमा है। वह शान्त रस भी यदि परमात्म आराधना से ओत प्रोत हो तो कवि की निर्मल आत्मा का दर्शन पाठकों को परम सन्तोष और आत्मीय आनन्द प्रदान करता है। यह प्रसिद्ध स्तोत्रों का दुर्लभतम खजाना किसी स्वर्ण-भण्डार से कम नहीं, यह तो सचमुच ही अमूल्य उपहार है। जिन पूर्वाचार्यों से हमें यह उपलब्ध हुआ हम उनके प्रति अनिबद्ध मंगल स्मरण पूर्वक नतमस्तक हो, कृतज्ञता ज्ञापित करते हुये राष्ट्रभाषा में रूपान्तरित यह शास्त्र आपके प्रशस्त स्वाध्यायी कर कमलों में समर्पित कर सकलकर्म क्षय की प्रबल भावना हृदय में रखते हुए पंच परमेष्ठी को कोटिशः नमोस्तु निवेदित कर क्षमा याचना करते हैं।

इस कृति में भक्तामर स्तोत्र, कल्याण-मंदिर स्तोत्र, एकीभाव स्तोत्र, विषापहार स्तोत्र, तीर्थंकर-स्तोत्र, अकलंक स्तोत्र, सुप्रभात स्तोत्र के साथ लघु स्तुतियाँ भी समाहित हैं। सभी रचनाएँ अनुदिन पठनीय हैं।

'' जैनम् वचनम् सदा वन्दे ''

उत्तम सत्य पर्व
2016, कोतमा (म.प्र.)

अंतर्भाव

हमारे गुरुवर सारस्वत कवि, शास्त्र कवि, श्रमणाचार्य श्री विभव सागर मुनिराज कोटि-कोटि कण्ठों पर राज करने वाली अमर रचना ''तेरी छत्रच्छाया'' के प्रसिद्ध रचयिता हैं। आपके द्वारा जो काव्य रचा जाता है, पाठक उस में ही रच जाता है। गद्य साहित्य हो या पद्य साहित्य दोनों पर आपका मौलिक अधिकार है।

पूर्व में आपके द्वारा रचित ''भक्ति शास्त्र, भक्ति भारती, विश्वशान्ति विधान, विभव विधान '', पद्य रचना की अमर कृतियाँ हैं। जबकि ''आलोचना सार, तत्त्व शास्त्र, भक्तामर शास्त्र, सम्यक्त्व शास्त्र'' आदि गद्य लेखन की श्रेष्ठतम प्रवचन कृतियाँ हैं।

कलाकार सदैव कला से और रचनाकार रचना से श्रेष्ठ होता है। इसका प्रत्यक्ष दर्शन तो मुझे तब हुआ, जब गुरुवर के संघ साथ मैं भी पर्वतराज सम्मेद शिखर की वंदना कर रहा था। मैंने देखा आप टोंक-टोंक पर अभूतपूर्व नवीन-नवीन रचनाएँ, भक्ति पाठ कर जन्म दे रहे थे, तब से अब तक मैं यह जानने उत्सुक हूँ, कि आपके हृदय गर्भ में ऐसी कितनी और रचनाएँ होंगी।

मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि हमारे गुरुवर सदा स्वस्थ रहते हुए निर्बाध रत्नत्रय का पालन करते हुए स्वपरहिताय जयवंत रहें।

सन्मति जैन, जैन चश्माघर
वनवे रोड, सागर म.प्र.

स्तोत्र - सूची

1	सुप्रभात स्तोत्र	1
2	दर्शन स्तुति	3
3	गुरु स्तुति	4
4	जिन स्तुति	6
5	भक्तामर स्तोत्र	8
6	एकीभाव स्तोत्र	18
7	विषापहार स्तोत्र	24
8	कल्याण मंदिर स्तोत्र	33
9	तीर्थंकर स्तोत्र	42
10	जिनवर स्तोत्र	49
11	अकलंक स्तोत्र	61
12	समाधि भक्ति (प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय अधिकार)	65

सुप्रभात स्तोत्र

करूँ मंगलाचरण जिनेश्वर, मंगलमय तेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।

मंगलमय अरिहंत देव हे !, सिद्ध–सिद्धि दाता ।
मंगलमय आचार्य देव हे !, पाठक श्रुत–ज्ञाता ।।
मंगलमय मुनिराज हमारे, काटो भव फेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।

मंगलमय जिनधर्म हमारा, जग जयवंत रहे ।
मंगलमय जिन आगम जग में, काल अनंत रहे ।।
मंगलमय प्रतिमा–प्रतिमालय, को वंदन मेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।2।।

मंगलमय हों सिद्ध भूमियाँ, सर्व सिद्ध कारी ।
मंगलमय हों तपो–भूमियाँ, पाप–तापहारी ।।
मंगलमय हों क्षेत्र हमारे, रहे शांति डेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।3।।

हे मंगलगृह ! चारों मंगल, मंगलमय कर दो ।
क्षण–क्षण मंगल, कण–कण मंगल, मंगलता भर दो ।।
मंगलकारी संघ चतुर्विध, सदा रहे मेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।4।।

आधि–व्याधि को हरने वाले, आदिनाथ स्वामी ।
विषयविजेता कषायजेता, अजितनाथ स्वामी ।।
आज आपकी संस्तुति से हो, भव शंभव मेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।5।।

अभिनंदन कर्ता अभिनंदन, सुमति–सुमति दाता ।
गुण पद्माकर पद्म सुपारस, चन्द्र चरित गाता ।।
पुष्पदंत शीतल श्रेयांस हो, श्रेयस् पथ मेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।6।।

वासुपूज्य पद पूजन करता, विमल भावना से ।
गुण अनंत को मैं पा जाऊँ, धर्म साधना से ।।
शांतिनाथ हो शांति प्रदाता, संदेशा तेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।7।।

दया पुजारी कुंथु जिनेश्वर, अहरह[1] अरह जपूँ ।
मोह विजेता बनूँ मल्लिजिन, सुव्रतनाथ भजूँ ।।
निरतिचार नियमों का पालन, हो भगवन मेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।8।।

नमि नेमि पारस जिन स्वामी, वर्द्धमान स्वामी ।
तीर्थंकर चौबीस हमें हों, नयनों पथगामी ।।
सब तीर्थंकर हों क्षेमंकर, उन्हें नमन मेरा ।
जिनदर्शन से होवे जिनवर, सुप्रभात मेरा ।।9।।

1-प्रतिदिन

दर्शन स्तुति

दरस दो नाथ तुम मेरे, दरस की आस लाये हैं ।
तरसते हम रहे स्वामी, तरशने आज आये हैं ।।
अरे मैं खान का पाहन, तुम्हारी चोट खाऊँगा ।
निकालो खोट तुम मेरी, तुम्हारी ओट आऊँगा ।।
तुम्हीं शिल्पी हमारे हो, यही विश्वास लाये हैं ।
तरसते हम रहे स्वामी, तरशने आज आये हैं ।।
दरस दो नाथ तुम मेरे....1

तलाशा आपने मुझको, कहाँ मेरा ठिकाना था ।
बड़ी वह मेरी भूल थी, प्रभु तुमको ना जाना था ।।
तराशो नाथ अब मेरे यही, अरदास लाये हैं ।
तरसते हम रहे स्वामी, तरशने आज आये हैं ।।
दरस दो नाथ तुम मेरे....2

कहीं जाने या अन्जाने, किए हों पाप जो मैंने ।
कभी भी भाव जागा हो, कहीं संताप का देने ।।
भुला दो भूल वह मेरी, यही अहसास लाये हैं ।
तरसते हम रहे स्वामी, तरशने आज आये हैं ।।
दरस दो नाथ तुम मेरे....3

तुम्हीं माता त्रिलोकों की, पिता तुम हो त्रिकालों के ।
समस्या में बना प्रभुवर, तुम्हीं हल हो सवालों के ।।
सँवारो भाग्य यह मेरा, चरण में दास आये हैं ।
तरसते हम रहे स्वामी, तरशने आज आये हैं ।।
दरस दो नाथ तुम मेरे....4

पटेरिया जी 2011

गुरु स्तुति

गुरु महिमा हम गा रहे, गुरु पूजा के साथ।
भक्ति भाव से जोड़कर, अपने दोनों हाथ॥1॥

दुर्लभ गुरु दर्शन मिलन, दुर्लभ गुरु से ज्ञान।
दुर्लभ से दुर्लभ महा, गुरु से दीक्षा दान॥2॥

गुरुवर भी भगवान हैं, प्रभुवर भी भगवान।
धरती के भगवान ये, वे नभ के भगवान॥3॥

श्री गुरुवर के मूलगुण, चेतन मूलाचार।
वचनामृत गुरुदेव के, समयसार का सार॥4॥

धर्मामृत नित पीजिये, पिला रहे गुरुदेव।
मोक्षमार्ग में जीव को, मिला रहे गुरुदेव॥5॥

एक वचन गुरुदेव का, जीवन हितकर जान।
विनय भक्ति से कीजिए, ज्ञानामृत रसपान॥6॥

जैसे कड़वी औषधि, तन के रोग मिटाय।
गुरुवाणी परमौषधी, मन के रोग मिटाय॥7॥

ज्यों रवि किरणें उग्र भी, कमलों को विकसाँय।
त्यों कठोर गुरु सूक्तियाँ, हृदय कमल विकसाँय॥8॥

खेवटिया गुरुदेव हैं, नैया पार लगाँय।
भवसागर से पारकर, मोक्षपुरी ले जाँय॥9॥

माँ जैसी ममता मिली, और पिता सा प्यार।
भाई जैसी भावना, गुरुवर के दरबार॥10॥

गुरु सूरज गुरु चंद्रमा, गुरु आगम गुरु दीप।
गुरु आज्ञाकारी बनूँ, भव-भव रहूँ समीप॥11॥

सेवा का अवसर मिले, मानूँ अपना भाग्य।
डाँट मिले तो मान लूँ, सर्वोत्तम सौभाग्य॥12॥

शुभाशीष में दीजिए, गुरुवर इतना दान।
कर कमलों से कीजिए, दीक्षा मुझे प्रदान॥13॥

पहले गुरुवर आपने, किया आत्म कल्याण।
गुरुवाणी दे कीजिए, अखिल विश्वकल्याण॥14॥

शुभ संगम दाता कुशल, गुरुवर आप महान।
रत्नत्रय का दो विभव, बनूँ स्वयं भगवान॥15॥

जयपुर 2012

जिन स्तुति

(गीता छन्द)

आपकी आराधना, सम्यक्त्व की आराधना ।
आपकी वाणी श्रवण, श्रुतज्ञान की आराधना ।।
आपकी चर्याग्रहण, चारित्र की आराधना ।
आपकी निष्काम पूजा, जैन तप आराधना ।।1।।

आपका दर्शन प्रभु जी, श्रेष्ठ सम्यग्दर्शनम् ।
आपका अर्चन प्रभु जी, श्रेष्ठ सम्यक् अर्चनम् ।।
आपका वन्दन प्रभु जी, काटता भव बन्धनम् ।
आपका शुभ नाम लेना, सुप्रभाती मंगलम् ।।2।।

आपके गुण गान गाना, कण्ठ का सौभाग्य है।
आपके वचनों को सुनना, कर्ण का सौभाग्य है ।।
आपका अभिषेक करना, कर-कमल सौभाग्य है ।
आपके चरणों में रहना, यह परम सौभाग्य है ।।3।।

आप तक चलकर जो आये, वे चरण ही धन्य हैं।
आप तक पल भर ठहरना, यह परमतम पुण्य हैं ।।
आपको माथा झुकाना, शीश पर आशीष है ।
आपको अपनी सुनाना, प्रार्थना जगदीश है ।।4।।

आपका जिन नाम जपना, जन्म का उच्छेद है ।
आपका जिन नाम भजना, भव दुखों का छेद है ।।
आपकी शुभ आरती ही, भवजलधि से तारती ।
आपकी पावन कृपा से, यह मिली जिन भारती ।।5।।

आपकी शुभ शांत मुद्रा, वीतरागी यह छवि ।
बतला रही कृत-कृत्यता पर, क्या लिखे कोई कवि ।।
आपके कैवल्य में, आदर्शवत् संसार है ।
आपके पद पंकजों में, वन्दना शतवार है ।।6।।

भावना निर्मल बने प्रभु, साधना बढ़ती रहे ।
चित्त में समता जगे प्रभु, नित्य दृढ़ता ही रहे ।।
सम्यक्त्व से ये मन हो पावन, ज्ञानमय आचार हो ।
हे जिनेश्वर आपको मम, वन्दना शतवार हो ।।7।।

जिनदेव तेरा दर्श पाकर, मन-सुमन यह खिल गया ।
मानो किसी दारिद्र को, चिन्तामणी धन मिल गया ।।
मेरा हृदय प्रभु आपके, दोनों चरण का धाम है।
तब कामधेनु, कल्पतरु, चिंतामणि क्या काम हैं ?।।8।।

यह धन्य जीवन धन्य तन-मन, धन्य यह पावन घड़ी ।
त्रैलोक्य दृष्टा आपकी जो, दृष्टि मुझ पर जा पड़ी ।।
हे आधि व्याधि नाशकर्ता, रोग भव हर लीजिये ।
शुक्ल ध्यानी ध्यान अपना, प्रार्थना पर दीजिये ।।9।।

जिन सूर्य के आलोक से, सम्यक्त्व आलोकित हुआ ।
जिन चन्द्र! के सद्दर्श, सद्धर्म अवलोकित हुआ ।।
जिन भक्ति पुण्य प्रकाश से, तन मन प्रफुल्लित हो गया ।
भगवान तेरे भक्त का, कल्याण मानो हो गया ।।10।।

द्रोणगिरि 2008

भक्तामर स्तोत्र

भावानुवाद – सारस्वत कवि श्रमणाचार्य विभवसागर

भक्तामर नमते प्रभु पद में, बड़े मुकुट शोभा ।
पाप रूप अंधियारा नाशे, प्रभु पद की आभा ।।
भव सागर में डूब रहे को, आप सहारा हो ।
हे आदीश्वर! आदि जिनेश्वर ! नमन हमारा हो ।।1।।

सकल शास्त्र के तत्त्व बोध से, जिनकी मति जागी ।
ऐसे इन्द्रों की निर्मल मति, संस्तुति में लागी ।।
भुवनत्रय आनंद प्रदायी, संस्तुतियों द्वारा ।
उन आदीश्वर को मैं भजता, बहा भक्ति धारा ।।2।।

देवों द्वारा पूजित आसन, ऐसे जिनवर की ।
बुद्धिहीन तैयार हुआ मैं, संस्तुति को उनकी ।।
जल में झलक रहे चंदा को, ज्यों बालक पकड़े ।
लाज त्याज हम काज मान त्यों, संस्तुति को उमड़े ।।3।।

हे गुणसागर ! शरद चन्द्रसम, उज्ज्वल गुण गाने ।
सुरगुरु भी सामर्थ्य न रखता, तव गुण गा पाने ।।
मगर–मच्छ भी उछल रहे हों, लहर भयंकर हो ।
कौन भुजाओं से तर सकता, ऐसे सागर को ।। 4।।

वह मैं हूँ जो शक्ति बिना भी, भक्तिवशी होके ।
संस्तव करने को तत्पर हूँ, बस तेरा होके ।।
सिंह के सम्मुख जाती हरिणी, सुध–बुध को खोके ।
अपना वत्स बचा लेती है, प्रीतिवंत होके ।। 5।।

अभी हँसी का पात्र बनूँगा, मैं विद्वानों से ।
भक्ति आपकी बुला रही है, हम अंजानों से ।।
कोयल कूँज रही क्यों वन में, हाँ वसंत आया ।
अरे आम्र की सुन्दर कलिका, ने मन उमड़ाया ।।6।।

नाथ! आपकी संस्तुति से ही, हम जग जीवों के ।
सघन कर्म के बन्ध नशेंगे, बांधे भव–भव के ।।
विश्व व्याप्त भौरें सा काला, घोर अँधेरा ज्यों ।
सूर्य किरण से छिन्न– भिन्न हो, हट जाता है त्यों ।।7।।

अरे कमलिनी के पत्ते पर, पड़ी ओस बूँदें ।
मोती तुल्य दमकती उस पर जन–मन आनन्दें ।।
यही मानकर मेरे द्वारा, यह संस्तव रचना ।
तव प्रभाव से हो जायेगी, सज्जन चित् हरना ।।8।।

दूर रहे वह संस्तव तेरा, जो निर्दोष अरे ।
तेरी कथा मात्र ही जग के, सारे पाप हरे ।।
दूर दिवाकर नभ में रहता, जग प्रभाव फैले ।
सरोवरों में देखो सुन्दर, सुन्दर कमल खिले ।।9।।

भक्त तिहारे तेरे सम हों, कुछ आश्चर्य नहीं ।
शिष्यों को आचार्य बनायें, खुद आचार्य यहीं ।।
निर्धन भी धनपति सेवा से, ज्यों धनवान बने ।
भक्त आपको भजते– भजते, त्यों भगवान बने ।।10।।

क्षीर सिन्धु का क्षीर पिया हो, मधुर– मिठैया सा ।
वह क्या खारा नीर पियेगा, लवण समुद्रों का ।।
जिसने देखा वीतरागमय, यह स्वरूप तेरा ।
उसे कहाँ सन्तोष मिलेगा, जो जिनपद चेरा ।।11।।

हे त्रिलोक सुन्दरतम प्रभुवर ! अहो रूप पाया ।
वीतरागमय शुभ अणुओं से, रची पुण्य काया ।।
उतने ही थे वे परमाणु, जिनसे आप रचे ।
इसीलिए तो तुम सा सुन्दर, कोई नहीं दिखे ।।12।।

सुर नर नाग नयन मनहारी, श्री मुख की आभा ।
जीत चुकी है लोकत्रय की, कीर्तिवती शोभा ।।
कहाँ कलंकी मलिन चन्द्रमा, काला –काला सा ।
दिन में जो फीका पड़ जाता, पुष्प छेवला सा ।।13।।

तीन लोक में फैल रहे हैं, तेरे गुण ऐसे ।
नभमण्डल से भूमण्डल पर, चन्द्रकला जैसे ।।
तीन लोक के नाथ आपका, लिये सहारा जो ।
कौन रोक सकता है उनको, स्वतंत्र विचरें वो ।।14।।

अरे यहाँ आश्चर्य नहीं कुछ, यह मन जो तेरा ।
रंचमात्र भी हुआ न विचलित, सुर परियों द्वारा ।।
प्रलय काल की जिस वायु से, पर्वत उड़े चले ।
क्या सुमेरु पर्वत की चोटी, किंचित् कभी हिले ।।15।।

धूम व वत्ती तेल रहित तुम, अनुपम दीपक हो ।
विश्व प्रकाशित करने वाले, चिन्मय दीपक हो ।।
प्रलय वायु भी बुझा न पाये, ऐसा दीपक जो ।
परम ज्योति परमात्म प्रकाशक, वह बुध दीपक हो ।।16।।

अस्त कभी भी ना होते हो, राहु नहीं ग्रसता ।
मेघों द्वारा कभी आपका, ना प्रभाव रुकता ।।
एक साथ ही लोकत्रय के, आप प्रकाशक हो ।
अतः आप सूरज से बढ़कर, महिमा धारक हो ।।17।।

मोह महातम हरने वाला, सदा उदित रहता ।
केतु नहीं ग्रस पाता जिसको, ना बादल ढकता ।।
चमक रहा चन्दा सा मुखड़ा, महा कान्ति धारी ।
ऐसा चन्दा कभी न देखा, परम शान्ति कारी ।।18।।

नाथ आपका मुख चन्दा जब, अन्धकार हरता ।
दिन में रवि व निशि में शशि की क्या आवश्यकता ।।
धान्य खेत पक जाने पर ज्यों, भरे बादलों से ।
अरे लाभ क्या हो सकता है, जल बरसाने से ।।19।।

जैसा ज्ञान आप में शोभे, सर्वजगत ज्ञाता ।
हरिहरादि देवों में वैसा, कभी नहीं भाता ।।
जैसा तेज महामणियों में, शोभा पाता है ।
वैसा किरणाकुलित काँच में, कभी न आता है ।।20।।

भला हुआ जो मैंने पहिले, उनको देख लिया ।
पीछे तुम्हें देखने पर ही, मन सन्तोष हुआ ।।
मेरा चित्त लुभाने वाला, कोई नहीं होगा ।
जिन दर्शन का लाभ मुझे बस, इतना तो होगा ।।21।।

शत शत नारी शत शत सुत को, जन्म दिया करती ।
किन्तु आपकी माता जैसी, कौन कहाँ रहती ।।
सभी दिशायें ताराओं को, जन्म दिया करतीं ।
पूर्व दिशा ही एक मात्र जो, दिनकर को जनती ।।22।।

अहो मुनीश्वर ! मुनिगण तुमको, ही ऐसा जाने ।
तिमिर विनाशक निर्मल दिनकर, परम पुरुष माने ।।
सम्यक् तरह आपको पाकर, मृत्युंजय पाते ।
तुम्हें छोड़ शिव पन्थ नहीं कुछ, अतः शरण आते ।।23।।

अव्यय तुम हो, विभु अचिन्त्य हो, हो असंख्य आदि ।
ब्रह्मा ईश्वर तुम अनंत हो, कामदेव आदि ।।
तुम योगीश्वर योग विशारद, एक अनेक लहें ।
ज्ञान स्वरूपी अमल जिनेश्वर, तुमको सन्त कहें ।।24।।

बुद्ध आप हो विबुधार्चित हो, बुद्धि बोध धारी ।
तुम्हीं हो शंकर, भुवनत्रय को, सम्यक् सुखकारी ।।
तुम्हीं विधाता मोक्षमार्ग की, विधि बतलाते हो ।
भगवन्! तुम ही पुरुषोत्तम हो, धैर्य दिलाते हो ।।25।।

भुवनत्रय के दुखहर्ता जिन! तुम्हें नमन मेरा ।
भूमण्डल के आभूषण जिन ! तुम्हें नमन मेरा ।
तीन लोक के परमेश्वर हो, तुम्हें नमन मेरा ।
भव सागर के शोषण कर्ता, तुम्हें नमन मेरा ।।26।।

सर्व गुणों ने तेरा आश्रय, अरे भला लीना ।
दोषों ने गर्वित होकर के, अन्य शरण लीना ।।
दोष वहाँ जाकर के मिलते, जहाँ दोष रहते ।
गुणवानों की शरण में आकर, गुण ही गुण रहते ।।27।।

परमौदारिक तन से प्रभु के, निकल रही आभा ।
नीचे रहकर ऊपर तरु की, बढ़ा रही शोभा ।।
सूर्य बिम्ब ज्यों निज किरणों को,ऊपर फैलाता ।
सघन बादलों में घिर कर भी, शोभा ही पाता ।।28।।

रत्न जड़ित सिंहासन सोहे, उस पर प्रभु काया ।
उदयाचल की चोटी पर ज्यों, बाल भानु आया ।।
वीतराग भावों का वर्द्धक, दृश्य अनौखा है ।
दुर्लभ दर्शन सुलभ हुआ, यह बढ़िया मौका है ।।29।।

कुन्द पुष्प सम रजत मनोहर, चारु चमर चलते ।
कुन्दन सम काया वाले प्रभु! तुम पर यूँ लगते ॥
ज्यों चंदा से अरे चाँदनी, झर– झर के आयी ।
गिरि सुमेरु के दोनों तट पर, यह महिमा छाई ॥30॥

तीन छत्र शोभित हैं सिर पर, चन्द्रप्रभा धारी ।
सहज समर्पित सेवक सम वह, भानुताप हारी ॥
और मोतियों की झालर भी, क्या शोभा लाये ।
लोकत्रय के परमेश्वर हो, कहने को आये ॥31॥

मधुर– मधुर ऊँचे स्वर वाली, दुन्दुभियाँ गूँजे ।
शुभ संगम के समाचार से, सर्व दिशा पूँजे ॥
तीर्थंकर की जय –जय–जय हो, उद्घोषण करतीं ।
नभमण्डल में तेरे यश को, दुन्दुभियाँ भरतीं ॥ 32॥

तीर्थंकर का पुण्य निराला, महिमा कौन कहे ।
गंधोदक की वर्षा होती, मन्द वयार बहे ॥
समवशरण में दिव्य मनोहर, सुन्दर सुमन गिरे ।
ऐसे लगते पंक्तिबद्ध ज्यों, जिनवर वचन खिरे ॥33॥

प्रभो! आपके प्रभा वलय से, भामण्डल चमके ।
सूर्य बिम्ब से भी तेजस्वी, दम–दम–दम दमके ॥
इसके सम्मुख लोकत्रय के, सब पदार्थ फीके ।
सूरज चन्दा एक साथ हैं, लगे बहुत नीके ॥ 34॥

मोक्षमार्ग दरशाने वाली, दिव्यध्वनि तेरी ।
सत्य धर्म बतलाने वाली, दिव्य ध्वनि तेरी ॥
विश्व हितैषी विशद अर्थमय, दिव्यध्वनि तेरी ।
सर्व समझ में आने वाली, दिव्यध्वनि तेरी ॥35॥

नूतन स्वर्ण कमल सम सुंदर, चरण कमल तेरे ।
नख से निकली कांति मनोहर, बन चरित्र चेरे ॥
जहाँ – जहाँ पद धरते प्रभु के, वहाँ–वहाँ देखो ।
सुरगण स्वर्ण कमल रचते हैं, भक्ति भाव लेखो ॥36॥

दिव्यध्वनि की उस बेला में, जो वैभव जैसा ।
अन्य कहीं भी ना देखा है, जिनवर तुम जैसा ॥
जैसी दीप्ति दिवाकर में है, गहन तिमिर हारी ।
वैसी क्या तारामण्डल में, है प्रकाशकारी ॥ 37॥

मद के झरने झर– झर बहते, गोल कपोलों लौं ।
जिसपर भौरें हों मड़राते, गुन–गुन कर तोलौं ॥
क्रोधासक्त हुआ यों हाथी, जब सम्मुख आवे ।
उसे देखकर भक्त आपका, कभी ना घबरावे ॥38॥

जिसने चीरे नाखूनों से, गजदल बड़े –बड़े ।
ऐसे सिंह के पंजों में यदि, तेरा भक्त पड़े ॥
निशंक निर्भय जिन पद का ही, आश्रय लिये रहे ।
क्रूर सिंह भी तभी शांत हो, आसन दिया करे ॥39॥

धधक रहीं ज्वालायें जिसमें, दावानल ऐसा ।
तेज फुलिंगें निकल रही हों, यम के मुख जैसा ।।
मानो विश्व निकलने आयी जो अग्नि ज्वाला ।
नाम मंत्र के जल सिंचन से, बने शांति– शाला ।।40

ऊपर को फण उठा रहा हो, लाल नयन वाला ।
क्रोधित होकर डसने आये,नागराज काला ।।
आदि नाम की नाग दमनियाँ, भक्त हृदय राखे ।
हो निःशंक वह नागराज को, भक्त शीघ्र लाँघें ।।41।।

रण भूमि में रण के घोड़े, ऊपर उछल रहे ।
गज चिंघाड़ें शत्रु पक्ष के, सैनिक सबल रहे ।।
नाम सुमरते तितर–वितर हों, शत्रु सैन्य रण में ।
जैसे सूर्योदय होते ही, अंधकार क्षण में ।।42।।

बरछी भालों की नोकों से, गजदल कटे मरे ।
खूनी नदियाँ बह निकली हैं, वर्णन कौन करे ।।
शत्रु पक्ष को जीत शीघ्र ही, विजय वरण कर ले ।
जिनशासन की विजय पताका, नभ मण्डल फहरे ।।43।।

जिस समुद्र में उछल रहे हों, मगरमच्छ भारी ।
पानी में ही आग लगी हो, घोर विपद कारी ।।
तूफानी बेगों से नौका, डगमग डग डोले ।
नाम सुमरते भक्त आपका, शीघ्र पार हो ले ।। 44।।

जिसे भयंकर हुआ जलोदर, रोग भार भारी ।
जीने की आशा छोड़ी हो, यम घर तैयारी ।।
ऐसे नर भी तेरी पद रज, अंग लगाते हैं ।
तत्क्षण कामदेव सा सुन्दर, तन पा जाते हैं ।।45

अरे लोह की जंजीरों से, जिसका तन जकड़ा ।
जंघायें भी छिलती जायें, ज्यों– ज्यों तन रगड़ा ।।
ऐसे बन्दी कारागृह में, बन्धन दुख पावें ।
नाम मन्त्र का जाप सुमरते, बाहर आ जावें ।।46।।

गज भय सिंह भय दावानल भय, अहिभय रणभय हो ।
या समुद्रभय आधि व्याधि भय, या बन्धन भय हो ।।
पाठ करें यदि भक्तामर का, नर विवेकशाली ।
उनके सारे भय भग जावें, बनें पुण्यशाली ।।47।।

हे जिनवर! तव गुण से गूँथी, भक्तामर माला ।
नाना विध के पुष्प मनोहर, गुण धागा डाला ।।
भक्त आपका जो भी इसको, सदा कण्ठ धारे ।
'मानतुंग श्री' उनको वरती, हुई विवश प्यारे ।। 48।।

एकीभाव स्तोत्र

पद्यानुवाद मुनि विभवसागर

एकभाव को प्राप्त हुए हैं, क्षीर–नीरवत् घुले –मिले ।
दुख देते कर्मों के बन्धन, भव–भव मेरे साथ चले ।।
हे जिन सूरज ! भक्ति आपकी, मुक्त करे दृढ़ बन्धन से ।
पाप, ताप, सन्ताप कौन सा ? जीत सके न वन्दन से ।।1।।

जैन तत्त्वविद्या के धारी, ज्ञानी ध्यानी कहते हैं ।
ज्योतिर्मय जिन! पाप विनाशी, मन मन्दिर में रहते हैं ।।
तेरे चरण युगल मय दीपक, भक्त हृदय में मिलते हैं ।
पाप तिमिर तब रह सक्ता क्या ? दीप जहाँ पर जलते हैं ।।2।।

चित्तलीन हो नाथ आप में, हर्ष भाव से नीर बहे ।
अश्रुधार से मुख भीगा हो, गद्‌गद् स्वर में शब्द कहे ।।
संस्तुति के मन्त्रों द्वारा जो, पूजा, अर्चा रचते हैं ।
तन बामी से नाग व्याधि के, तत्क्षण अरे! निकलते हैं ।।3।।

भव्यजनों के पुण्योदय से, स्वर्गलोक से वसुधातल ।
आने वाले तेरे द्वारा, स्वर्णमयी रचदी भूतल ।।
ध्यान द्वार से मन मन्दिर में, भक्त कराते तुम्हें प्रवेश ।
कर देते तन को स्वर्णमय, चमत्कार कुछ नहीं विशेष ।।4।।

जीव मात्र के परम हितैषी, आप अकारण भाई हो ।
सकल तत्त्व के ज्ञाता दृष्टा, शक्ति पुंज सुखदायी हो ।।
आप हमारे मन मन्दिर की, शुभ शय्या पर शयन करें ।
कहो प्रभो जी फिर भी कैसे, मेरे दुख को सहन करें ।।5।।

नाथ निरन्तर इस भव वन में, जन्म–जन्म से घूम रहा ।
नय शैली अमृत की वापी, आज प्राप्त कर झूम रहा ।।
हिम सी शीतल–चन्द्र सु–शीतल, जिसके अन्दर किया प्रवेश ।
दुख दावानल की वह गर्मी, यहाँ–कहाँ रहती कुछ शेष ।।6।।

पद विहार के द्वारा जिनवर, लोकत्रय पावन करते ।
स्वर्णमयी हो जाते पंकज, पद–पंकज तेरे पड़ते ।।
मन–मन्दिर में रहकर जिनवर, अंग–अंग को छूते हो ।
फिर वह मंगलनाथ कौन से, रहते मुझे अछूते जो ।।7।।

मदन विजेता जिन कहलाते, दुर्निवार मद को जीता ।
दर्शन करके भक्ति पात्र से, वचनामृत रस जो पीता ।।
कर्मरूप वन से निकलें वह, सौख्य सदन में आ जाते ।
महाव्याधि के पैने कंटक, क्या उनको दुख दे पाते ।।8।।

मानस्तंभ रचा रत्नों से, कैसे मान गलाता है ।
रत्नराशि का ढेर दूसरा, मन में मान दिलाता है ।।
आप विराजे उसके अन्दर, चमत्कार कर देता है ।
मान विखण्डित होता भवि का, दर्शन जो कर लेता है ।।9।।

प्रभो ! आपके तन पर्वत से, बहता शीतल सुखद समीर ।
रोग धूल को उड़ा –उड़ाकर, भव्य जनों की हरता पीर ।।
हृदय –कमल पर नाथ आपको, जिसने सदा बिठाया हो ।
लौकिक और अलौकिक वह क्या? तुमसे फल न पाया हो ।10।।

भव–भव में जो दुख पाये हैं, यादें दुःख दिलाती हैं ।
हथियारों सा घात करे वह, मुख से कही न जाती हैं ।।
आप जानते, हे सर्वेश्वर ! भक्ति भावना लाया हूँ ।
जैसा चाहें आप करें अब, चरण–शरण में आया हूँ ।।11।।

जीवन्धर जी मन्त्र सुनाते, नमस्कार मन में लाता ।
पापाचारी एक श्वान जब, परम देव गति पा जाता ।।
मणिमय निर्मल जापों द्वारा, नमन मन्त्र जपते धर नेह ।
वह पाते हैं स्वर्ग– सम्पदा, इसमें नहीं तनिक सन्देह ।।12।।

जिनवर भक्ति सम्यग्दर्शन, मोक्ष महल की चाबी है ।
मोक्ष द्वार का ताला खोले, सद्दृष्टि बड़भागी है ।।
वह यदि जिसके पास नहीं फिर, ज्ञान चरित तपवाला हो ।
मुक्तिद्वार न खोल सकेगा , चाहे जिस मत वाला हो ।।13।।

निश्चय से यह मोक्षमार्ग तो, पाप तिमिर से ढका हुआ ।
उथल–पुथल गहरे गह्वर हैं, दुख गर्तों से रुका हुआ ।।
तत्त्व प्रकाशी जिनवाणी का, दीपक आगे नहीं चले ।
कौन पथिक चल सकता शिवपथ, मोक्ष महल भी किसे मिले ।।14।।

आत्मज्ञान का विपुल खजाना, दर्शक को आनन्द करे ।
कर्मरूप पृथ्वी पटलों से, हुआ आज क्यों बन्द अरे ! ।।
अन्य दृष्टि को दर्शन दुर्लभ, सम्यग्दृष्टि देख सकें ।
भक्ति कुदाली कर में लेकर, आत्म खजाना खोद सकें ।।15।।

नय हिमगिरि से पैदा होकर, शिवसागर तक जाती है ।
भक्ति भाव की निर्मल गंगा, तव चरणों में आती है ।।
श्रद्धा से अवगाहन करके, पाप –पंक प्रक्षाल किया ।
शुद्ध हुआ है चित्त हमारा, संशयहीन, निहाल हुआ ।।16।।

परम सुखी हे जिनवर ! तेरा, निर्विकल्प हो ध्यान किया ।
मैं वह हूँ जो नाथ आप हैं, ऐसा अनुभव सुखद किया ।।
नहीं नाथ मैं आज आप सा, फिर भी तो संतोष अहो ।
इष्ट लाभ को पाया मैंने, चाहे इसमें दोष कहो ।।17।।

प्रभो ! आपकी दिव्य देशना, वचन वारिधि बोध विमल ।
स्याद्वाद की लहरों द्वारा, दूर करें जग मिथ्यामल ।।
बुद्धिमान मन मन्दरगिरि से, बार–बार मंथन करते ।
विषय रूप विष त्याग करें भवि, शिव अमृत रस को वरते ।।18।।

जो स्वभाव से रहें असुन्दर, रखते तन पर भूषण हैं ।
बैरी मुझको जीत न लेवें, रखते शस्त्र–प्रदूषण हैं ।।
लगते हैं सर्वांग मनोहर, हैं अजेय शक्तिवाले ।
अस्त्र–शस्त्र वस्त्राभूषण भी, वीतराग ने तज डाले ।।19।।

भव सागर के तारण हारे, मुक्तिवधु के स्वामी हो ।
प्रभो ! आप हो लोकत्रय के, संस्तुति यह अभिरामी हो ।।
इन्द्र–शतेन्द्र करें पद सेवा, नहीं प्रशंसा तेरी है ।
उनके भव दुख हरनेवाली, अनुशंसा की चेरी है ।।20।।

नाथ आप, तो अनुपमेय हैं, अनुपम हैं वचनावलियाँ ।
सच्ची संस्तुति कर सकती क्या, पुद्‌गलमय शब्दावलियाँ ।।
भले नहीं हो सच्ची प्रस्तुति, पर चेतन परिणाम विमल ।
भक्ति रूप अमृत से सिंचित, कल्पवृक्ष सम देते फल ।।21।।

निंदा सुनकर कुपित न होते, ना प्रसन्न होते निज –पर ।
नहीं अपेक्षा रखते पर से, परम उपेक्षा संयम धर ।।
तो भी यह भुवनत्रय स्वामी ! हुए आप हि आज्ञाधीन ।
जिनवर सन्निधि बैर मिटाती, कोई दूजा नहीं प्रवीण ।।22।।

स्वर्गलोक परियाँ किन्नरियाँ, जिनकी महिमा गाती हैं ।
केवलज्ञानी विभो मूर्तियाँ, लोकालोक जताती हैं ।।
संस्तुति करने जो आतुर हों, मोक्षमार्ग निर्बाध बने ।
मंगलमय यात्रा हो उनकी, बोधवन्त जिनग्रन्थ बने ।।23।।

आप चतुष्टय मण्डित जिनवर, मन में तुम्हें समाते जो ।
समय– नियम से सादर तुमको, हृदय कमल में ध्याते जो ।।
परम शलाका पुण्य–पुरुष वह, कल्याणक पाँचों वरतें ।
हों तीर्थंकर पदवी धारक –सौख्य शिवालय पग धरते ।।24।।

भक्तिभाव से नतमस्तक उन, इन्द्रों द्वारा अर्चितपाद ।
आगम चक्षु साधु जगत में, गा ना पाते गुण अनुवाद ।।
किन्तु खेद हम जैसे मूरख, छद्‌म भाव रचते गुणगान ।
वह सम्मान स्वाश्रित जन को, कल्पवृक्ष सम दे वरदान ।।25।।

वैयाकरण जगत में जितने, वादिराज से लघु सब ही ।
तर्क केशरी जग में जितने, वादिराज से लघु सब ही ।।
काव्य 'विभव' के रचनेवाले, वादिराजसे लघु सब ही ।
सन्त पुरुष जग में है जितने, वादिराज से लघु सबही ।।26।।

प्रेरक–प्रसंग

पाप प्रवृत्ति कैसे घटे...?

एक सेठ एक मुनिराज के पास गया और कहा आप निष्पाप और निर्भय कैसे रहते हैं ? मैं पापों में लिप्त तथा भयभीत रहता हूँ मुझे भी कोई उपाय बताइये ना। मुनिराज ने कहा-मैं भी जानता हूँ, मैं यह बता सकता हूँ आज से सातवें दिन तुम्हारी मृत्यु होने वाली है। यह सुन सेठ चिन्तातुर हो गये। अब वह सारे पाप कार्यों को छोडकर भगवान का भजन करने लग गये। ऐसे में ही सेठ के सातों दिन निकल गये तब वह मुनिराज के पास गया और कहने लगा कि आपने कहा था कि मेरी मृत्यु सातवें दिन में हो जायेगी परन्तु मेरी मृत्यु तो नहीं हुई। मुनिराज बोले भाई तुम मेरी बात को नहीं समझे, मैंने कहा था कि सप्ताह के सात वारों में से किसी भी वार कभी न कभी हमारी मृत्यु अवश्य आना है और जिस दिन मृत्यु आये उस दिन सारा परिग्रह यहीं छूट जाना है तब बताइये पाप प्रवृत्ति घटेगी या बढ़ेगी ?

विषापहार स्तोत्र

पद्यानुवाद - मुनि विभवसागर

विषापहारी ! स्वाश्रित ! जिनवर, पूर्ण विश्व के ज्ञाता हैं ।
परिवर्तन व्यापार जानते, नहीं परिग्रह नाता है ।।
दीर्घोत्तम आयुष के धारक, फिर भी नहीं जरा वाले ।
तीर्थंकर श्री आदिनाथ हों, हम सब जग के रख वाले ।।1।।

हे अचिन्त्य ! गुण सागर तेरा, नहीं किसी ने पार लिया ।
युगारम्भ में प्रजापाल बन, जगती का उद्धार किया ।।
योगीजन भी कर ना सकते, करता हूँ भक्ति अभिराम ।
जहाँ न पहुँचे सूरज किरणें, दीप न पहुँचे क्या अविराम ? ।।2।।

त्याग दिया अभिमान इन्द्र ने, तेरी संस्तुति रचने का ।
छोड़ नहीं सकता मैं उद्यम, जिनवर नाम सुमरने का ।।
तेरे गुण को देख रहे हम, अपने ज्ञान झरोखे से ।
सूख–बूझ पर हर्ष मनाऊँ, जागे भाग्य अनोखे से ।।3।।

अखिल विश्व को देख रहे तुम, तुम्हें देखता ना कोई ।
निखिल विश्व को जान रहे तुम, तुम्हें जानता ना कोई ।।
नाथ आप हैं कितने कैसे ? कह सकती ना वाणी है ।
फिर भी जो संस्तुति करता हूँ, निज असमर्थ कहानी है ।।4।।

बालकवत् होते नर पीड़ित, किये स्वयं अपराधों से ।
उनको तुमने दी निरोगता, शुद्ध चेतना भावों से ।।
भला–बुरा हम नहीं जानते, हैं जग के मूरख प्राणी ।
बाल बैद्य जिननाथ आप हो, औषधि है अमृतवाणी ।।5।।

लेता–देता नहीं किसी को, सूरज आता जाता है ।
आज नहीं मैं कल दे दूँगा, यही बहाना लाता है ।।
केवलज्ञानी सच्चे सूरज, जो माँगो सो देते हैं ।
जीवमात्र के मोह तिमिर को, पलभर में हर लेते हैं ।।6।।

चलें भक्त अनुकूल आपके, सर्व सुखों को पाते हैं ।
जिनमत से प्रतिकूल चले जो, दुख स्वयमेव उठाते हैं ।।
किन्तु आप दोनों के आगे, समदर्शी आदर्श रहे ।
इसीलिए भुवनत्रय चरणों, नम्रीभूत सहर्ष रहे ।।7।।

सागर तल की गहराई वह, सागर में देखी जाती ।
अचल सुमेरू ऊँचाई भी, पर्वत में लेखी जाती ।।
धरती– अम्बर भी विशालता, अपनी –अपनी गाते हैं ।
गहरे–ऊँचे तुम विशाल हो, लोकत्रय बतलाते हैं ।।8।।

जिनशासन में जिनवाणी में, परिवर्तन सिद्धान्त कहा ।
जीव मोक्ष से वापिस आते, क्यों न यह अनेकान्त कहा ।।
आँखों दिखते सुख को तजकर, अनदेखे की आशा है ।
चेष्टायें उल्टीं सी लगती, पर सच्ची परिभाषा है ।।9।।

मदन आपके द्वारा जिनवर, अच्छी तरह जलाया है ।
महादेव ने अगर जलाया, फिर कैसे भरमाया है ।।
अरे विष्णु ने वृन्दा के सह, काम भाव से शयन किया ।
वीतराग तुम रहे जागते, अतः आपको नमन किया ।।10।।

अथवा ब्रह्मा पापरहित हों , अन्य देव हों पाप सहित ।
उनके दोषों के कहने पर, नहीं आपके गुण प्रकटित ।।
क्षीर सिन्धु की महिमा जग में , निज गुण जानी जाती है ।
यह छोटा तालाब–तलैया, निंदा नहीं बताती है ।।11।।

जीव कर्म को बाँधे–बाँधे, ले जाते है किधर–किधर ।
कभी कर्म वह इस प्राणी को, भटकाते हैं इधर–उधर ।।
खेवटिया ज्यों नाँव चलाता, इक–दूजे को ले जाते ।
भवसागर के पार लगैया, जिनवर ऐसा बतलाते ।।12।।

सुखाभिलाषी अज्ञ मनुजगण, दुख समूह आचरण धरें ।
गुण पाने को दोष पालते, धर्म हेतु अघ चरण करें ।।
तेल हेतु जग में ज्यों बालक, रेता पेला करते हैं ।
वैसे उन्मार्गी पन्थी जन, पाप मैल मन धरते है ।।13।।

विष को दूर कराने वाले, भटक रहे जंजालों में ।
किन्तु सच्चे मणी मन्त्र क्या ? लाते नहीं ख्यालों में ।।
नाथ आप ही मणी मन्त्र हैं, औषधि और रसायन हैं ।
नाग दमनियाँ विषहर अमृत–तव नामों के गायन हैं ।।14।।

आप चित्त में भगवन् ! अपने, नहीं कभी कुछ भी रखते ।
भक्त हृदय में तुमको रखकर, लोकत्रय वश में करते ।।
अहो भला आश्चर्य यही है, चित्त रहित जीवन्त रहे ।
गुण अचिन्त्य महिमाशाली हैं, कारण आप अनन्त कहे ।।15।।

भूत, भविष्यत, वर्तमान के, जड़–चेतन को जान रहे ।
ऊर्ध्व, मध्य, पाताल भुवन की, संख्याओं को मान रहे ।।
सब कुछ माना जा सकता पर, प्रभु आपका कितना ज्ञान ।
जड़–चेतन जग और भी होते, उसे जानता केवलज्ञान ।।16।।

रम्य परम पावन मनहारी, इन्द्रों की वह सेवाएँ ।
तेरा क्या उपकार करेंगी ? उनको ही फल दे जाएँ ।।
दिवसपति के लिए जो सादर, करें छत्र का धारण जो ।
छाया उनको ही मिलती है, आत्मसुखों का कारण हो ।।17।।

कहाँ राग से रहित आपहो, सुखमय कहाँ प्रभु उपदेश ।
तो फिर कैसे कहा आपको, इच्छाओं से रहित जिनेश ।।
यदि इच्छा प्रतिकूल बोलते, जग को परम प्रेय कैसे ।
असली रूप न जान सके हम, जिनवर तुम ऐसे कैसे ?।।18।।

चित्त उदार भला जिसका हो, निर्धन है कुछ पास नहीं ।
धनवालों से ज्येष्ठ श्रेष्ठ नर, दे देता वह सब कुछ ही ।।
जलबिन्दु भी पास ना रखती, अचल मेरु की मालाएँ ।
सागर से निकले ना बूँदे, गिरि से निकले सरिताएँ ।।19।।

नाथ आपके प्रातिहार्य क्यों ? अरे इन्द्र ने कार्य किया ।
तीन लोक की सेवा करने, प्रातिहार्य सौभाग्य लिया ।।
मिली प्रेरणा तुमसे उसको, कारण कार्योपचार कथन ।
प्रातिहार्य जो तुमको कहते, वह केवल व्यवहार वचन ।।20।।

धनवालों को लखकर निर्धन, करें निरन्तर आदर हैं ।
भिन्न आपसे, धनिक अधन का, करते सदा अनादर हैं ।।
अंधकूप से देख रहा नर, उजियाले मैं कौन खड़ा ? ।
देख न पाता पुंज प्रकाशी, अंधियारे मैं कौन खड़ा ? ।।21।।

निज वृद्धि निःश्वाँस श्वाँस को, नयन पलक टिमकारों को ।
अनुभव पर भी नहीं जानते, पुद्गलमयी विकारों को ।।
वे अविज्ञ क्या जान सकेंगे, ज्ञेय तत्व के ज्ञाता को ।
आत्म विशारद ज्ञान पुंज गुण, जिन ! सर्वज्ञ ! विधाता को ।।22।।

नाभिराज सुत आदिनाथ हैं , बाहुबल के जनक महान ।
वीतराग सर्वज्ञदेव का, इस प्रकार करते कुल गान ।।
किया हस्तगत कुन्दन तजते, पत्थर से उपजा यह जान ।
जप, तप, संयम नहीं पूजते, मूर्ख शिरोमणि निपट अजान ।।23।।

भूल –भुलैया भुला– भुलाकर, भव–भव अरे बिगाड़ा है ।
ऐसे मोह सुभट का जग में, बाजा विजय नगाड़ा है ।।
सुरासुरों से विजित मोह का, पलक मात्र में किया निरोध ।
नाश स्वयं का ही कर देता, बलवानों से किया विरोध ।।24।।

एक अकेला मोक्षमार्ग ही, प्रभो! आपने देखा है ।
चतुर्गति के सघन वनों को, अन्य देव ने देखा है ।।
इसीलिए हे जिनवर तुमको, तनिक नहीं अभिमान हुआ ।
निज भुजबल को नहीं देखते, नासादृष्टि ध्यान हुआ ।।25।।

रोके राहु रवि किरणों को, पानी अनल बुझाता है ।
तूफा– प्रलय जलोदधि नाशे, विरह विभोग नशाता है ।।
तुम्हें छोड़कर सभी पदारथ, विनाशीक हैं नश्वर हैं ।
अब्याबाधी ! अर्जित व्याधी ! परम सिद्ध अविनश्वर हैं ।।26।।

अनजाने में किया आपको, नमस्कार जो फल देता ।
अन्य देव को किया जानकर, नमन नहीं वह फल देता ।।
हरितमणी को काँच समझकर, धरता वह अनमोल है ।
किन्तु काँच को माणिक माने, वह जग में निर्मोल है ।।27।।

वाणी भूषण शब्दों के जो, पण्डित ज्ञानी कहलाते ।
जलते रहें कषायों से जो, हरिहर उनको बतलाते ।।
दीप बुझे तो बढ़ना कहते, घट फूटे कल्याण कहें ।
सत्य–असत्य स्वयं ही खोजे, जग में जो धीमान रहें ।।28।।

नैक–अर्थ प्रतिपादन शैली, एक अर्थ जीवन शैली ।
हितकारी वचनामृत सुनकर, भरें पुण्य से नर थैली ।।
कौन मनुज न अनुभव करते, वक्ता वच निर्दोष कहे ।
सुस्वर वाणी वही बोलता, जो ज्वर मुक्त निरोग रहे ।।29।।

नहीं कामना रखते पर से, नैसर्गिक निःसृत होते ।
ऐसे होने पर यह होना, कुछ नियोग जग के होते ।।
मैं समुद्र को पूरा कर दूँ, चाहे नहीं सुधाकर है ।
उसके भला उदित होने पर, होता पूरण सागर है ।।30।।

गुण गम्भीर परम पावन तव, बहुधा बहुत अनंत भले ।
तेरे सिवा कहीं ना दिखते, इसीलिए तो अंत मिले ।।
किन्तु कभी प्रस्तुतियों द्वारा, भाव अन्त ना पा सकते ।
इससे बढ़कर गुण का गुण क्या ? सन्त पुरुष ना गा सकते ।।31।।

संस्तुतियों द्वारा ही जग में, सिद्ध नहीं होते अभिमत ।
भक्ति, सुमरण, नमस्कार भी, अपना–अपना रखते मत ।।
अतः नाथ मैं भक्ति करता, सुमरण करूँ प्रणाम करूँ ।
नेकानेक उपायों द्वारा, सिद्धि फल को प्राप्त करूँ ।।32।।

लोकत्रय के नायक जिनवर, परम ज्योतिमय शाश्वत हो ।
बल अनंत सुख धर्म चतुष्टय, गुण अनंतमय भास्वत हो ।।
पुण्य–पाप से रहित हुए पर, पुण्य सम्पदा के कारण ।
वन्दनीय! तुम नहीं वन्दते, नमन करूँ पद रज धारण ।।33।।

आप अमूर्तिक गन्ध रूप रस, वर्ण शब्द से हीन रहे ।
मूर्त्त–अमूर्त्त सभी को जाने, केवल बोध प्रवीण कहे ।।
सबके जानन हारे होकर, हम सबको अन्जान हुए ।
हे अचिन्त्य, जिनवर जी मेरे, आत्म ध्यान लवलीन हुए ।।34।।

मन से नहीं उलाँघे जाते, हे अचिन्त्य गम्भीर परम ।
अरे धनिक जन करै याचना, तुम निर्धन धनहीन चरम ।।
धनपति! जिनपति ! आदिनाथ की, परम शरण को मैं जाता।
भवसागर से पार उतारें, पार नहीं तेरा पाता ।।35।।

त्रिभुवन दीक्षा गुरु कहाते, तुमको नमन हमारा हो ।
आत्मगुणों से वर्द्धमान जिन! प्रतिपल नमन हमारा हो ।।
अचल सुमेरु की भांति ही, आत्मोन्नत कहलाते हैं ।
ढेला,पत्थर, पर्वत मिलकर, मेरू नहीं बनाते हैं ।।36।।

स्वयं प्रकाशी! दिवा–निशा भी, नहीं बाध्य ना है बाधक।
लघुता गुरुता नहीं समायी, अगुरुलघु गुण के साधक ।।
रहने वाले एक रूप शिव, काल कला से अन्त रहित ।
करूँ वन्दना भक्ति भाव से, सिद्ध प्रभु ! अरिहन्त सहित ।।37।।

मंगलकारक ! विषहर ! तारक ! आदि जिनेश्वर हे भगवन्।
संस्तुति करके दीन भाव से,नहीं माँगता वर अर्हन् ।।
तरुवर का आश्रय पाने से, छाया तरु मिलती स्वयमेव ।
लाभ कौन सा करें याचना, मन चाहा जब मिले सदैव ।।38।।

देना चाहें आप यदि कुछ, केवल इतना दान करें ।
मेरी भक्ति रहे आप में, जब तक घट में प्राण रहें ।।
ऐसी दया करेंगे मुझ पर, मेरा यह विश्वास बड़ा ।
कौन गुरुजन सद्शिष्यों के, मनोभाव नहि भरें घड़ा ।।39।।

हे जिनेन्द्र ! जजस चाहे विध से, करे विनत तेरा गुणगान।
भक्ति आपकी शिव फलदायी, मनवांछित देती वरदान।।
भक्ति भाव से श्रद्धा धरकर, शिष्ट रीति से किया बखान।
धन जय सुख यश 'विभव' दिलाये, मोक्ष लक्ष्मी करे प्रदान।।40।।

जब तक उपासक स्वयं उपास्य नहीं बन जाता, तब तक उसे उपास्य की उपासना करना अनिवार्य है।

कल्याण मंदिर स्तोत्र

कल्याणों के मन्दिर जिनवर, उर में विश्व समाया है।
भव्यजनों के पाप विनाशक, भय को अभय दिलाया है।।
भव सागर में डूब रहे को, हैं जहाज सम चरण कमल।
परम प्रशंसित पार्श्व जिनेश्वर, नमस्कार करके प्रतिपल।।1।।

अति महानतम गरिमा सागर, गुण गरिमा के हैं भण्डार।
जिनकी संस्तुति के रचने में, देव गुरु ना पाते पार।।
कमठासुर के मान भस्म को, प्रभु आप थे अग्नि समान।
उनही पार्श्वनाथ भगवन का, भक्ति से करता गुणगान।।2।।

साधारण भी महिमा गाने, मैं असमर्थ शिशु अन्जान।
मेरे जैसे अज्ञ जनों से, होगा कैसे भक्ति गान।।
वह उलूक अत्यंत चपल हो, जगमगात उस दिनकर का।
वर्णन क्या कर सकता बोलो ?, अज्ञ अन्ध मैं जिनवर का।।3।।

मोहकर्म के क्षय होने से, करते गुणगण का अनुभव।
फिर भी गणना ना कर सकते, जगती पर ऐसे मानव।
प्रलयकाल ने बहा दिया हो, रत्नाकर का नीर विपुल।
प्रकट हुई जो रत्न राशियाँ, गिन सकता है कौन विमल ?।।4।।

प्रभो! आप तो शोभित होते, नेक गुणों के विमल सदन।
कहने को तैयार हुआ हूँ, मैं अबोध शिशु अन्तर्मन।।
अरे! बुद्धि के अनुसार क्या, हाथों को फैलाता ना ?
सागर का विस्तार शिशु क्या, तुतलाता बतलाता ना ?।।5।।

योगीश्वर भी कह ना पाते, मुझे मिले अवकाश कहाँ ?
तव संस्तुति आरम्भ करूँ मैं, बिना विचारे आज यहाँ ।।
ज्यों पक्षीगण सदा बोलते, अपनी–अपनी भाषा में ।
त्यों प्रभुवर गुणगान करूँ मैं, भावों भरी पिपासा में ।।6।।

दूर रहे महिमा आराधन, जो अचिन्त्य है मानव से ।
तेरे नाम मात्र का सुमरण, रक्षा करता भव–भव से ।।
ग्रीष्मकाल की तीव्र तपन से, राही आकुल व्याकुल हों ।
दूर जलाशय होने पर भी, पाकर पवन निराकुल हों ।।7।।

तन मन्दिर की हृदय वेदि पर, पार्श्वनाथ जब आते हैं ।
जन्म– जन्म के सघन बन्ध भी, क्षण भर में टल जाते हैं।।
मलयागिरि चन्दन पर लिपटीं, सर्पों की वह मण्डलियाँ।
ज्यों मयूर के आ जाने पर, ढीली पड़ती कुण्डलियाँ ।।8।।

चोर गाय को ले जाते हों,नयनों दिखता गोपालक ।
गाय छोड़कर प्राण बचाने, चोर भागते हैं अपलक ।।
उसी तरह जिन पारस तेरा, दर्शन जो कर लेते हैं ।
कष्ट सैकड़ों महाभयंकर, पल भर में हर लेते हैं ।।9।।

तारण–तरण कहाते कैसे ? कैसे पार लगाते हो ?
भक्त हृदय में स्वयं बिठाते, पार आप तो जाते हो ।।
मशक तैरती वह सागर में, हवा भरे जो अन्दर में ।
हृदय कमल में तुम्हें बसाते, तिरते वही समुन्दर में ।।10।।

ब्रह्मा–विष्णु–हरिहरादि भी, कामदेव आधीन हुए ।
उसे जीतकर बने जितेन्द्रिय, क्षण भर में स्वाधीन हुए ।।
तीन लोक के दावानल को, जल ही एक बुझाता है ।
किन्तु एक बड़वानल ऐसा, जल को अरे जलाता है ।।11।।

अति महानतम गरिमा वाले, शक्ति पुंज हे अगम! अचल।
भक्त हृदय में बिठा आपको, कैसे तिरते हैं भव जल ।।
भली भाँति अति लाघवपन से, वह भव से तर जाते हैं।
अथवा सच है महापुरुष गुण, चिन्तन में ना आते हैं।।12।।

पहले क्रोध जलाकर कैसे,कर्म चोर का नाश किया ? ।
क्षमा धर्म से जय होती है, अचरज पूर्ण प्रकाश किया ।।
शीतल ऋतु की शीतलता जब, हिमकण वरषा लाती है ।
हरे भरे उपवन को भी क्या, आकर नहीं जलाती है ?।।13।।

हृदय कमल पर तुमको ध्याते, योगीश्वर निज चिन्तन में।
करें निरन्तर वह अन्वेषण, अपने आत्म निकेतन में ।।
अमल कान्ति शोभावाली वह, कमल बीज रक्षित रहता।
कमल कर्णिका के अन्दर ही, अन्य कहीं वह ना रहता।।14।।

प्रभो आपको शुद्ध भाव से, जो भी प्राणी ध्याते हैं ।
काया की माया को तजकर, परम सिद्ध हो जाते हैं ।।
कंचन कल्मष खो देता है, तेज आग पर तपकर के ।
वैसे आतम हो परमातम, नाम निरन्तर भजकर के ।।15।।

भक्तों द्वारा ध्याये जाते, औदारिक तन मन्दिर में ।
नाश देह का कैसे करते ?, रहे आप जब अन्दर में ।।
अथवा सच मध्यस्थ हुए जो, महापुरुष जब आते हैं ।
मध्यभाग में आकर के वह, विग्रह भाव मिटाते हैं ।।16।।

हे जिनवर ! जिन आत्म रूप से, सदा सुधी जन ध्याते हैं।
परम ध्यान के ही प्रभाव से, तुम जैसे बन जाते हैं ।।
अमृत के चिन्तन से जल क्या ? अमृतमयी बन जाता ना।
निश्चय से फिर वह अमृत क्या ? विष को दूर भगाता ना ।।17।।

केवलज्ञानी सच्चे ईश्वर, पर तुमको ऐसे जाने ।
हरिहर ब्रह्मा विष्णु आदि में, अन्यमती तुमको माने ।।
रोग पीलिया हो जाने से, श्वेत वर्ण का शंख धवल ।
दिखने लगता रंग विपर्यय, नीला पीला सा मिल जुल ।।18।।

दिव्य ध्वनि की उस वेला में, तव सन्निधि में आकर के ।
शोक रहित हो जाता तरुवर, चरण कमल रज पाकर के ।।
सूर्योदय के हो जाने पर, वृक्ष सहित संसार अखिल ।
फूल पत्र सब पुलकित होकर, विकसित होते हैं प्रतिपल ।।19।।

समवशरण में नभ से अविरल, पुष्प वृष्टि सुरगण करते ।
चारों तरफ सुमन गिरते फिर, डण्ठल नीचे क्यों रहते ?
अथवा सचमुच सुमनस सज्जन, चरण कमल में आते हैं।
निश्चय से कर्मों के बन्धन, नीचे को हो जाते हैं ।।20।।

हृदय सिन्धु से प्रकट हुए हैं, विशद अर्थ गम्भीर वचन।
अमृतवचन कहाते क्यों वह, दिव्य ध्वनि मंगल प्रवचन ?
क्योंकि प्रभो वचनों का प्याला, कर्णाञ्जुलि जो पान करें।
परम सुखों का अनुभव करके, भक्त अमर शिवधाम वरें।।21।।

नीचे से ऊपर को जाते, होले– होले डोल रहे ।
रजत कान्ति से युक्त चँवर वह, सुरगण जिनको ढोल रहे।।
तीर्थंकर के पद कमलों में, शुद्ध भाव जो नमन करें ।
मानो यह संदेशा देते, ऊर्ध्वलोक नर गमन करें ।।22।।

सिंहासन पर आप विराजे, श्याम वर्ण तव सुन्दर तन ।
मंगलमय खिरती जिनवाणी, भव्य जीव सुनते प्रवचन ।।
ज्यों स्वर्णाचल उच्च शिखर पर, सावन बादल छाये हों।
ऊँचे स्वर से गर्जन सुनकर, वन मयूर हरषाये हों ।।23।।

फूट रहीं किरणें ऊपर को, नीलवर्ण भामण्डल से ।
फीका पड़ता तरु अशोक वह, प्रभा–पुंज नवमंगल से ।।
वीतराग के चरण कमल में, राग रंग क्या खोता ना ?
अरे सचेतन कौन पुरुष वह, वीतराग सा होता ना ? ।।24।।

ऊँचे स्वर से करे घोषणा, दिग् दिगन्त नभमण्डल में ।
तीन लोक आमंत्रण देती, सुर दुन्दुभि नभ जल थल में ।।
अरे! चणियो आलस तजकर, जिन मण्डप में आ जाओ।
मुक्तिपुरी ले जाने वाले, पार्श्वनाथ के गुण गाओ ।।25।।

प्रभो! आपके द्वारा ही जब, लोकालोक उजाला है।
शशि मण्डल फिर अरे काम क्या ?, शोभित रहने वाला है।।
मुक्ताओं से सजधज करके, तीन छत्र तन रच आया।
अपनी कान्ति समुज्ज्वल हेतु, एक सहारा जिन पाया।।26।।

तीन लोक आपूरित गुण से, तीन पीठिका रची हुईं।
माणिक मणियाँ कंचन मण्डित, रजत कान्ति से खचित हुईं।।
गन्धकुटी पर आप विराजे, चारों ओर सुशोभित हो।
कान्ति प्रताप यशोगुण द्वारा, भव्यों के मन मोहित हो।।27।।

सुर सुरेन्द्र पद वन्दन करते, नम्र मौलि की मालायें।
मुकुटों की मणियों को तजकर, शरण आपकी ही आयें।।
अथवा सुमन सुमन से प्राणी, प्रभो! शरण को वरण करें।
चरण छोड़कर अन्य न जायें, तव सन्निधि में रमण करें।।28।।

भवसागर से विमुख आप हो, फिर भी भव से पार करें।
पद अनुशरणा करने वाले, भव्यों का उद्धार करें।।
उन्मुख होकर कुंभ भला जब, तिरता जाता सागर है।
अरे आप निष्पाक प्रभो हो, पाक हुआ वह गागर है।।29।।

तीन लोक के स्वामी होकर, निर्धन क्यों कहलाते हो ?
अविनाशी अक्षर विधि वाले, फिर भी लिख ना पाते हो।।
अबुधवन्त होने पर भी तुम, केवल बोध प्रभाषित हो।
हे जनपालक ! पार्श्व जिनेश्वर! करते विश्वप्रकाशित हो।।30।।

अवनि तल से धूल उड़ाकर, नभ मण्डल को भरा दिया।
प्रलयकाल सी चला आँधियाँ, जल–थल–नभ को डरा दिया।।
क्रोध भाव से कमठासुर ने, दुर्द्धर जो उपसर्ग किया।
प्रभु छाया भी ना ढक पाया, स्वयं कर्म से लिप्त हुआ।।31।।

गर्जन करते मेघ भयंकर, बिजली तड़ –तड़ तड़क रहीं।
मानो आग बरषती नभ से, ऐसे कड़–कड़ कड़क रहीं।।
मूसलधारा वारिष करके, तुम पर जो अपकार किया।
कमठासुर ने अपने ऊपर, तलवारों सा वार किया।।32।।

भूत–पिशाचों को भेजा था, महा भयंकर रूप लिए।
निकल रहीं मुख से ज्वालायें इधर–उधर को बाल किए।।
करें उपद्रव दौड़–दौड़ कर, अति भीषण उपसर्गों से।
अरे कमठ को बाँध गये वे, भव दुखों के कर्मों से।।33।।

तीन लोक के स्वामी जिनवर ! भक्त आपके निर्मल मन।
तजकर के गृह जंजालों को, करें चरण युग आराधन।।
रोम–रोम रोमांचित होकर, तीनों काल विधानों से।
धन्य–धन्य वे मनुज धरा पर, भक्ति करें सुर–गानों से।।34।।

संकट मोचन पार्श्वनाथ हे! इस अपार भव वारिधि में।
नहीं सुना है नाम आपका विपदाओं की जलनिधि में।।
सुन लेता यदि नाम मंत्र तो, विपदाओं की ये नागिन।
सचमुच ऐसा मान रहा मैं, कभी पास क्या आती जिन?।।35।।

जिनवर तेरे चरण युगल को, कभी नहीं मैंने पूजा ।
मनोकामना वरद कुशल जो, पूजा सम फल ना दूजा ।।
चिंतामणि व कल्पवृक्ष सम, चरण नहिं पूजे निष्काम ।
इस कारण ही हे मुनीश ! मैं हुआ पराभव का हि धाम ।।36।।

मोह महातम के पटलों से, ढके हुये थे नेत्र विमल ।
इसीलिये हे प्रभु आपको, देखा नहीं कभी इकपल ।।
दर्शन जो तेरा कर लेता, उदयागत कर्मों के बन्ध ।
क्या मुझको दुख दे सकते थे, क्षण भर में होते निर्बन्ध ।।37।।

नाम सुना पूजायें भी की, जिनवर दर्शन किए सदा ।
भक्ति भाव से हृदय कमल में, प्रभो बिठाया नहीं कदा ।।
मुक्ति फल वह दे नहीं पाती, भाव रहित करनी हरपल ।
इसीलिए दुखपात्र हुआ मैं, ज्यों पत्थर पर बीज विफल ।।38।।

दुखी जनों के जन बान्धव हे ! परमशरण आश्रयदाता ।
हे करूणालय ! पुण्यधाम हे, परम यतिवर शिर नाता ।।
भक्ति भाव से नमन करें हम, रागद्वेष का गलन करो ।
कृपादृष्टि बादल बरषा के, दुखांकुर का दलन करो ।।39।।

निखिल विश्व के पावन कर्त्ता, संख्यातीत गुणागर हे ।
शरणागत के हे प्रतिपालक, कर्मजयी सुखसागर हे ।।
हे प्रसिद्ध जगमहिमा वाले, पाकर के पद अवलम्बन ।
चिन्तन् किया कभी ना मैंने, धिक्धिक्धिक् निष्फल जीवन ।।40।।

देवों द्वारा वन्दनीय हे ! विश्व तत्त्व के ज्ञाता हो ।
तारणतरण जिनेश्वर तुम ही, जीव मात्र के त्राता हो ।।
मैं दुखियारा दुख से पीड़ित, दुख सागर से पार करो ।
दयामूर्ति हे करुणा सागर, मेरा भी उद्धार करो ।।41।।

प्रभो! आपके चरण कमल की, पूजन आराधन अविरल ।
पुण्य कोष जो पाया हमने, करके भक्ति भाव विमल ।।
यदि कुछ भी फल देते सचमुच, परम शरण शिवगामी हो ।
जन्म–जन्म तक दास रहूँ मैं, आप हमारे स्वामी हों ।।42।।

इस प्रकार आराधन करते, सम्यग्दर्शन धी वाले ।
इकटक तेरे मुखमण्डल को, सदा निहारे मति वाले ।।
अंग अंग से पुलकित होकर, भरे हुये उल्लासों से ।
विधि विधान से संस्तुति रचते, आती–जाती श्वाँसों से ।।43।।

जीव मात्र के नयन कुमुद को, कुमुद चन्द्र पारस भगवन ।
तेरी संस्तुति रचने वाले, पा जाते है स्वर्ग सदन ।।
स्वर्ग सम्पदा भोग भोगकर, भव्य मनुज तन पाते हैं ।
अष्ट कर्मदल नष्ट करें वह, मुक्ति 'विभव' पा जाते हैं ।।44।।

तीर्थंकर स्तोत्र
रचयिता — आ. विभव सागर

हे आदिनाथ ! तेरी प्रतिमा, मेरी श्रद्धा को जगा रही ।
यह शिवपथ की संदेशक बन, नित मोक्षमार्ग में लगा रही ।।
यह वीतरागता परिचायक, ज्ञायक स्वभाव दर्शाती है ।
अरु बाल मोहिनी छवि प्यारी, भक्तों का मन हरषाती है ।।

दर्शन करते ही, हे प्रभुवर ! नयनों में आप समा जाते ।
तब भक्त नयन प्रेमाश्रु से, नयनों में तुमको नहलाते ।।
निजशीष बिठा प्रक्षाल करें, फिर हृदय कमल पर पधराते ।
तन रोम—रोम रोमांचित हो, नचते—गाते पद सिर नाते ।।1।।

हो कर्म विजेता प्रभुवर तुम, यह 'अजित' नाम सुखदायी है ।
पहले मन इन्द्रिय पर जय पा, कर्मों की फौज भगायी है ।।
तुम हो अजेय तुम हो विजेय, तुम श्रेय प्रेय आनन्दमयी ।
मैं अजितनाथ पूजा करता, तुम ध्येय ज्ञेय निर्द्वन्दमयी ।।2।।

सम्भव! जिनवर का दर्शन ही, कर्मों का उपशम करता है ।
भावों में प्रबल विशुद्धि दे, क्षय और क्षयोपशम भरता है ।।
सम्भव कर दें, भव भव सम्भव, समभाव भरें संवर पथ दें ।
अरु मोक्षमहल तक ले जाने, मम बनें सारथी शिवरथ दें ।।3।।

मधुवन में कपि करें वंदन, अभिनन्दन का अभिनन्दन कर ।
निज मन से भक्त करें वन्दन, अभिनन्दन का पद वन्दन कर ।।
प्रमुदित मन हो, मुकुलित कर हो, वा —नर वन्दन करता कहता ।
ऐसे अभिनन्दन का वन्दन, जग का क्रन्दन हरता रहता ।।4।।

हे सुमति प्रभो! दो सुमति हमें , दुर्मति दुर्गति को दूर करो ।
मैं सुमति कहूँ, मैं सुमति लहूँ मैं सुयति रहूँ मन सुमति भरो ।।
हे समिति पन्थ के निर्माता, हे समिति सन्त! मन समिति वरो ।
मम सुमतिनाथ! नम सुमतिमाथ, दो सुमति साथ मम सुगति करो ।।5।।

श्री पद्मप्रभो! के पादपद्म, यह भक्तभ्रमर मन मँडराया ।
आनन्द कन्द, मकरन्द पिया, निज चिदानंद पा हरषाया ।।
हर्षित होकर मन नाच उठा, जिन गुण गुन गुन गुंजन गाता ।
मानो प्रभुवर के चरणों में, वह पूजक बन पूजा गाता ।।6।।

प्रभुवर सुपार्श्व! दो पार्श्व हमें, हम डूब रहे भवसागर में ।
दे करके नाथ सहारा तुम पहुँचा दो, प्रभु! शिवसागर में ।।
मैं तेरा नाम जपूँ प्रभुवर, तुम पर ही एक भरोसा है ।
हे नाथ! आपके हाथों में, मेरे जीवन की नौका है ।।7।।

श्री चन्द्रप्रभो का ज्ञान विशद, सम्पूर्ण कलाओं वाला है ।
ज्यों शरद पूर्णिमा का चंदा, करता जग में उजियाला है ।।
नभ चन्दा तो घटता—बढ़ता, पर चन्द्रप्रभो न घटते हैं ।
अतएव भक्त दिन रैन सदा, जय चन्द्रप्रभु की रटते हैं ।।8।।

प्रथमानुयोग करणानुयोग, चरणानुयोग द्रव्यानुयोग ।
ये जिनशासन के चार चरण, इक बिन हो जाते अनुपयोग ।।
ज्यों चार चक्र से रथ चलता, इक चक्र बिना रुक जाता है ।
त्यों ही चारो अनुयोग मिलें, तब पुष्पदन्त पथ पाता है ।।9।।

जिन शीतल! हो सब शीलमयी, पर शीतल होकर पावक हो ।
चऊ कर्म घातिया घातक हो, परघातक नहीं अघातक हो ।।
अष्टादश दोष विनष्ट किये, परनाशक नहीं विकाशक हो ।
हम भूले भटके भविकों को, शीतल सन्मार्ग प्रकाशक हो ।।10।।

व्यवहार और निश्चय दोनों, नय साधन –साध्य कहाते हैं ।
ज्यों तरु में पहले फूल खिलें, पीछे निश्चय फल आते हैं ।।
यह तत्त्व देशना जिनवर की, सर्वोदय मंगलकारी है ।
सम्यक् श्रोता उपदेशक ही, श्रेयस् पथ का अधिकारी है ।।11।।

बसुधा पूजित श्री वासुपूज्य, वसुद्रव्य पूज्य, हम पूजक हैं ।
त्रैकाल्य–पूज्य त्रयलोक पूज्य, त्रय योग पूज्य हम पूजत हैं ।।
जब वसुधा पर अवतरित हुये, तब वसुधा हो गई रत्नमयी ।
श्री वासुपूज्य की पूजन से, जीवन बनता त्रय रत्नमयी ।।12।।

है विमलनाथ का ज्ञान विमल, वह विमल ज्ञान रत्नाकर सा ।
मेरे गोपद सम ज्ञानों में, क्या तेरा ज्ञान समा सकता ।।
फिर भी संस्तुतियाँ कर करके,धो लूँगा स्वयं कर्म दल–मल ।
तन विमल बने मन विमल बने, वाणी जीवन हो विमल–विमल ।।13।।

दुःख किसे मिला ? वह जीव तत्त्व, किससे मिलता ? वह पुद्गल है।
दुःख का कारण क्या ? आस्रव है, दुख कैसे बँधता ? बन्धन है।।
दुःख को कैसे रोका जाये ? वह संवर तत्त्व कहाता है ।
वह दुःख भी दूर करूँ कैसे ? वह हेतु निर्जरा गाता है ।।14।।

दुःख मुक्त अवस्था कैसी है ? वह मोक्ष तत्त्व कहलाता है ।
इस अनेकान्त जिनवाणी का, जिनवर अनन्त से नाता है ।।
श्रद्धान ज्ञान तप चर्या से, वह मोक्ष तत्त्व मिल जाता है ।
जिनवर अनंत का यह पथ ही, हमको अनंत सुख दाता है ।।5।।

हम बनें धर्म के अनुयायी, जिनधर्म सदा सुखदायी है ।
जिनधर्म और जिनदेव बिना, बहु कष्ट सहा दुखदायी है ।।
जिनधर्म सदा जयवन्त रहे, जिनधर्म! तरण–तारण त्रिभुवन ।
हो कर्म शमन शिवपंथ गमन, जिनधर्म नमन! जिनधर्म नमन ।।16।।

आहार, बहोरीबन्द प्रभो, खजुराहो के हे शान्ति प्रभो ।
थूवोन चन्देरी वानपुरम्, कारीटोरन के शान्ति प्रभो ।।
जय रामटेक जय नेमगिरि, जय मुक्तागिर के शान्ति प्रभो ।
स्वीकारो मेरा नमन प्रभो! हे सिद्धालय के शान्ति प्रभो ।।17।।

चक्रेश प्रभो! तीर्थेश प्रभो, रूपेश प्रभो! दिवि अवतारी ।
हे शान्ति विधायक शान्ति प्रभो! हे शान्ति मूर्ति करुणाधारी ।
हे दुखहारी हे सुखकारी, कर दो सब मेरे दोष शमन ।
मैं अर्घ चढ़ाता शान्ति प्रभो, हो विश्वशांति के लिए नमन ।।18।।

प्रशम भाव का उत्पादन, प्रथमानुयोग से होता है ।
संवेग भाव का संवर्द्धन, करणानुयोग से होता है ।।
अनुकम्पा गुण का संरक्षण, चरणानुयोग से होता है ।
आस्तिक्य भाव निज में धारण, द्रव्यानुयोग से होता है ।।19।।

अनुयोग सभी उपयोगमयी, शुभ–शुद्ध भाव के हैं कारण ।
ऐसे अनुयोग प्रदाता की, पदरज करता मस्तक धारण ।।
दे हितकारी संदेश विभो! जग को सन्मार्ग दिखाया है ।
श्री कुंथुनाथ प्रभु के चरणों, हमने यह अर्घ चढ़ाया है ।।20।।

पहले सम्यक् की नींव भरो, फिर ज्ञान भित्ति ऊँची करना ।
शुभ ज्ञानमयी दीवारों पर, चारित की छत निर्मित करना ।।
यह मोक्षमहल के शिल्पकार, श्री अरहनाथ ने बतलाया ।
क्रमशः जिसने पथ अपनाया, उसने ही मोक्षमहल पाया ।।21।।

जो दर्शनार्थ जाना चाहे, पर भीड़ राह अवरोधक हो ।
आवाज, लगाते तब जाते, वह शब्द बने पथ शोधक हो ।।
त्यों मोक्षमार्ग की राहों में, कर्मोदय बनता बाधक है ।
तो पूजा रोज रचाता जा, जिनपूजा शिवपथ साधक है ।।22।।

व्रत देव लोक में ले जाता, अव्रत नरकों में ले जायें ।
जो जीव जहाँ जाना चाहें, वह वैसा ही पथ अपनायें ।।
अव्रती व्रतों को ग्रहण करें औ व्रती व्रत में पारायण हों ।
व्रत उपदेशक मुनि सुव्रत जी, मेरे शिव पथ में कारण हों ।।23।।

रे! बार बार दधि–मंथन से, ज्यों उत्तम माखन मिलता है ।
त्यों बार बार श्रुत मंथन से, निज आत्म तत्त्व फल फलता है ।।
अतएव परम आवश्यक है, चिन्तन मंथन जिनवाणी का ।
प्रभु नमिनाथ की यह वाणी, कल्याण करे हर प्राणी का ।।24।।

हरिवंश तिलक हे नेमी प्रभु! भव्यों को आप दिवाकर हो ।
हे जिन कुंजर ! हे अजर! अमर! लोकत्रय आप प्रभाकर हो ।।
बलदेव नमें वसुदेव नमें, चरणों में तीनों लोक नमें ।
श्री नेमीनाथ पूजन करते, जिनवर भक्ति में भक्त रमें ।।25।।

उर्जयन्त गिरि गिरिनार गिरि, श्री नेमीनाथ निर्वाण गिरि ।
जयवन्त रही जयवन्त रहे, यह जिनशासन की प्राण गिरि ।।
हम तीर्थ वन्दना करके यह, गिरिनारी सदा बचायेंगे ।
इसकी रक्षा में तन मन धन, अर्पण कर अर्घ चढ़ायेंगे ।।26।।

समता सुमेरु ! क्षमताधारी, हे दया क्षमा के अलंकार ।
हे महामना ! हे महामुनि !, हे धर्मतीर्थ के तीर्थंकार ।।
वामानंदन ! काटो बन्धन, जग का वन्दन स्वीकार करो ।
हे पार्श्वनाथ ! हे कृपानाथ !, मुझको भवसागर पार करो ।।27।।

जय महावीर! शासन नायक, क्षायिक ज्ञायक सुखदायक हो ।
जय वर्द्धमान भगवान वीर, अतिवीर सुसन्मति लायक हो ।।
तुम जिओ और जीने दो शुभ, सन्देशा जग में फैलाया ।
धर्म अहिंसा परमो धर्मः यह, विश्व शान्ति पथ दर्शाया ।।29।।

कुण्डलपुर का आँगन बोले, उन महावीर की जय जय जय।
विपुलाचल का कण–कण बोले, उन महावीर की जय जय जय॥
पावापुर का सरवर बोले, उन महावीर की जय जय जय।
सम्पूर्ण विश्व मिलकर बोले, उन महावीर की जय जय जय॥30॥

दोहा

यह तीर्थंकर संस्तुति, करके शुभ गुणगान।
रत्नत्रय को पाल कर, भक्त बने भगवान॥
आदिनाथ से आदिकर, महावीर पद अन्त।
पूर्ण भक्ति से पूजता, चौबीसों भगवन्त॥

जिनवर स्तोत्र
आ. विभवसागर रचित

जिनवर जय हो! जिनवर जय हो, गौतम ने गुणगान किया।
प्रथम भक्त बन रत्नत्रय पा, गणधर बन सब ज्ञान लिया॥
भक्त–प्रवर श्री कुन्दकुन्द की, भक्ति भावनाओं का बल।
आद्य दिगम्बर, आद्य दिगम्बर, गूँज उठा गिरनार अचल॥1॥

जिनवर! पद में सुरवर नमते, ऋषिगण–मुनिगण नमन करें।
सम्यग्दर्शन देकर जिनवर, मिथ्यादर्शन शमन करें॥
वीतराग! जिन! हितउपदेशी! तीर्थंकर! सर्वज्ञ! अहा!॥
पद–वन्दन कर संस्तुति करता, मैं बालक अनभिज्ञ रहा॥2॥

स्तोत्र–परम्परा

महाकवीश्वर मानतुंग ने, भक्तामर संस्तोत्र रचा।
महामुनीश्वर वादिराज ने, एकीभाव संस्तोत्र रचा॥
सर्व प्रथम जिनसेनदेव ने, रच सहस्र नामावलियाँ।
जिनको पढ़ते–सुनते होती, अन्तर्मन दीपावलियाँ॥3॥

स्तोत्र–प्रेरणा

काव्य कला कौशल प्रकटाया, संस्तुति विद्या रचकर के।
चमत्कार जग को दिखलाया, स्तोत्र स्वयम्भू भजकर के॥
देवागम में आगम भरकर, तार्किक शैली दरशायी।
दीपक बनकर दिया उजाला, तब मुझमें कुछ सुध आयी॥4॥

भक्ति, मुक्ति मार्ग

मुक्तिदायिनी भक्तिभाव की, परम्परा अक्षुण्ण रही ।
नमस्कार में चमत्कार की, गणना सदा अगण्य रही ।।
भक्तिभाव ही सम्यग्दर्शन, जिनगुण गाना सम्यग्ज्ञान ।
जिनगुण धारण सम्यग्चारित, परम्परा से पथ–निर्वाण ।।5।।

अतिशय क्या ?

प्रतिमा जितनी हुई पुरातन, उतनी –उतनी पावनता ।
पूजा –मन्त्रों भक्ति स्वरों से, बढ़ती जाती नित क्षमता ।।
ऊर्जाओं के विपुल स्रोत जब, बहकर बाहर आते हैं ।
अपूर्व अतिशय उद्घाटित हो, चमत्कार कहलाते हैं ।।6।।

जिन मन्दिर

जिन मन्दिर की पावन प्रतिमा, मन मन्दिर में समा गयी ।
जिन मन्दिर की पवित्र ऊर्जा, मन मन्दिर में जमा भयी ।।
जिन मन्दिर की शीतलता यह, मन मन्दिर शीतल करती ।
जिन मन्दिर की उज्ज्वलता यह, मन में उज्ज्वलता भरती ।।7।।

विशुद्ध–ऊर्जा केन्द्र

वीतराग मुद्रा से हर पल, वीतराग ऊर्जा बहती ।
और आपके जिन मन्दिर में, एकत्रित होकर रहती ।।
प्रातः संध्या अतः भक्तगण, दर्शन करने आते हैं ।
भक्ति भाव से दर्शन करके, शुभ ऊर्जा ले जाते हैं ।।8।।

प्रेम–क्षेम कारक

वीतरागमय वह ऊर्जा ही, शुद्ध शान्त मन कर देती ।
जन्म–जन्म के पाप अमंगल, पल भर में वह हर लेती ।।
वातावरण सुहाना होता, सदा परस्पर प्रेम रहे ।
तव अचिन्त्य महिमा है ऐसी, घर–घर मंगल क्षेम रहे ।।9।।

भक्ति निमित्त

फूल रही फुलवारी का ज्यों, कोना–कोना महक उठे ।
आम्र मंजरी पाकर के ज्यों, कोयलियाँ भी कुहुक उठे ।।
उसी तरह जिन मन्दिर तेरा, भक्ति–भाव से महक रहा ।
अतः जिनेश्वर भक्त आपका, कोयलिया सा कुहुक रहा ।।10।।

भक्त का अपनत्व

तुम सबके भगवान कहाते, अतः सभी की बात सुनो ।
सबकी सुनकर समदर्शी हो, सबके हित की आप गुनो ।।
भिन्न–भिन्न ज्यों सभी शिष्यगण, गुरु को बात बताते हैं ।
गुरुजन तब शिष्यों को उत्तर, प्रमुदित हो बतलाते हैं ।।11।।

भक्त प्रेम

माँ को अपनी बात बताना, उत्तम शिशु का कार्य रहा ।
शिशु को फिर कैसे समझाना, यह माँ को अनिवार्य रहा ।।
उसी तरह जिन! भक्त आपको, अपनी व्यथा सुनायेगा ।
जिज्ञासा के समाधान पा, फूला नहीं समायेगा ।।12।।

छवि दर्शन

प्रमुदित मुद्रा माता की ज्यों, शिशु को पास बुलाती है ।
प्रेम भरी मीठी वाणी ज्यों, तन–मन को हरषाती है ।।
वैसे ही जिन छवि आपकी, प्रेम भाव दरशाती है ।
बिन बोले ही सब कुछ कहती, भव्यों को समझाती है ।।13।।

जिनदेरी

नहीं सुनाना आत्म–कहानी, तेरे ही गुण गाना है ।
जिनगुण गाते–गाते भगवन, तुम जैसा बन जाना है ।।
आस यही है प्यास यही है, यही कामना मेरी है ।
उसको शिवपुर में क्या देरी, जो पहुँचा जिन देरी है ।।14।।

भक्ति गंगा

गंगा में अवगाहन करते, ज्यों निर्मल तन हो जाता ।
भक्ति–भाव की इस गंगा में, तन–मन उज्ज्वल हो जाता ।।
जैसे उत्तम वैद्य दवा दे, तन के रोग मिटाता है ।
वैसे ही जिनदर्श आपका, मन के रोग मिटाता है ।।15।।

जिनवाणी महिमा

घोर अमावस की रजनी हो, मूसल धारा बरस रही ।
पथ भूला हो पथिक यदि तब, बिजली चमके जहाँ कहीं ।।
पल भर को भी मिली रोशनी, पथ रोशन कर देती है ।
वैसे ही यह जिनवाणी माँ, सम्यग्दर्शन देती है ।।16।।

स्तुति लाभ

यथा सहस्त्रों सरिता बहकर, सागर में मिलने आतीं ।
सहज समर्पित वे सरिताएँ, सागरमय ही बन जातीं ।।
इसी तरह जिन भक्त आपके, द्वार तुम्हारे आते हैं ।
जिनवर के गुण गाते–गाते, जिनवरमय हो जाते हैं ।।17।।

समर्पण का फल

किन्तु सत्य जो रत्नाकर में, गोता नित्य लगाते हैं ।
वहीं स्वयं इक दिन अवश्य ही, रत्न हाथ में लाते हैं ।।
नाथ आप हो गुण रत्नाकर, मैं तो गोता खोर रहा ।
सम्यग्दर्शन ज्ञान रतन पा, कितना हर्ष–विभोर अहा ।।18।।

मुक्ति आमंत्रण

पावनता का सम्यक् अवसर, समवशरण में आता है ।
जन्म–जन्म का पुण्य हमारा, जिन मन्दिर में लाता है ।।
मोह बुलाता हमको घर में, मोक्ष बुलाता मन्दिर में ।
मोह भुलाता भव बंधन में, मोक्ष बुलाता अन्दर में ।।19।।

पूज्य प्रतिमा

नास्तिक जन को शिलाखण्ड हो, शिल्पकार को हो प्रतिमा ।
दर्शक गण को आकर्षण हो, वे क्या जानें जिन महिमा ।।
भगवत्ता के संस्कार से, हुई प्रतिष्ठित गुण गरिमा ।
भक्तजनों को अतः पूज्य है, हे जिनेन्द्र तेरी प्रतिमा ।।20।।

भक्त समर्पण

हैं पवित्र परमाणु जितने, प्रभु आप ढिग आते हैं ।
कितना कोई विलग करे पर, अन्य कहीं न जाते हैं ।।
ज्यों सरिताएँ आकर देखो, सागर में मिल जाती हैं ।
किन्तु कभी उस सागर से फिर, दो बूंदें क्या जाती है ।।21।।

मनवांछित फल प्राप्ति

अगर नहीं कुछ मिलता तुमसे, तव समीप क्यों आयेंगे ?
प्रभुवर तेरी महिमा गरिमा, हम बालक क्यों गायेंगे ?
जलमय शुभ्र सरोवर लखकर, ज्यों पक्षी सर में आते ।
सुस्वादु निर्मल शीतल जल, बिन माँगे क्या ना पाते ।।22।।

संस्तुति मोक्षमार्ग साधक

संस्तुत्य भले प्रत्यक्ष नहीं हो, फिर भी संस्तुति करने से ।
संस्तोता का जन्म सफल हो, गुण संस्तुतियाँ रचने से ।।
संस्तुति से सम्यग्दर्शन हो, संस्तुति से सद्ज्ञान मिले ।
संस्तुति से सम्यग्चारित हो, संस्तुति से निर्वाण मिले ।।23।।

सम्यक्त्व लाभ

यहाँ लिया शुभ नाम आपका, नाम वहाँ तक जा पहुँचा ।
यहाँ किया शुभ ध्यान आपका, ध्यान वहाँ तक जा पहुँचा ।।
यह अटूट विश्वास हमारा, सिद्ध शिला तक जा पहुँचा ।
सिद्धालय का शुभ आमन्त्रण, हृदय हमारे आ पहुँचा ।।24।।

छत्रछाया

श्रद्धा भक्ति विनय समर्पण, यही चार संस्तंभ रहे ।
इनके ऊपर प्रभो कृपा की, चादर हर पल बिछी रहे ।।
सुखद छाँव दे सुखदायक हो, ताप निवारक तनी रहे ।
शिव सुखदायी जिनवर संस्तुति, पाप निवारक बनी रहे ।।25।।

भक्तिमार्ग

भक्तों का अधिकार प्रथम है, जिनवर संस्तुति रचने का ।
भक्ति मार्ग ही श्रेष्ठ मार्ग है, भव दुःखों से बचने का ।।
अशुभ भाव का संवर होता, शुभ भावों से पुण्य बढ़े ।
पुण्य फला अरिहंत दशा पा, लोक शिखर पर भक्त चढे ।।26।।

अशोक वृक्ष

पहले तरुवर शोक सहित था, बिना आपके दर्शन के ।
शोक रहित है अशोक तरुवर, आज आपके दर्शन से ।।
तव समीपता का आकर्षण,जग जनता का शोक हरे ।
झूम–झूमकर सबसे कहता, तरुवर स्वयं अशोक अरे ।।27।।

पुष्पवृष्टि

पुष्पवृष्टियाँ बरस रही हैं, नाथ आपके चरण कमल ।
बारह योजन फैल रहे हैं, सुमन सुगंधित दिव्य नवल ।।
पुष्पवृष्टि के इस पराग ने, किया विभूषित सृष्टि को ।
मात्र सुमन ही सुमन दिखाते, दिया है ऐसी दृष्टि को ।।28।।

देवदुन्दुभि

देव–दुन्दुभि नाद श्रवण कर, मन–मयूर भी नाच उठे ।
वर्षा–ऋतु की शंका पा ज्यों, वन मयूर भी नाच उठे ।।
मधुर–मधुर गम्भीर स्वरों में, दुन्दुभियाँ जय नाद करे ।
आमंत्रण के स्वर गुँजाती, लोकत्रय संवाद भरे ।।29।।

सिंहासन

मात्र आपकी सन्निधि पाकर, हुआ अलंकृत सिंहासन ।
बिना छुए ही नाथ आपने, पावन कीना पीठासन ।।
तो फिर हम सद् भक्त आपके, मन में तुम्हें बिठाते हैं ।
विस्मय क्या जिन नाथ आप सम, यदि पावन हो जाते हैं ।।30।।

छत्रत्रय

चंद्रकांति को लजा रहा है, प्रभो आपका छत्रत्रय ।
बुला–बुलाकर बाँट रहा है, भुवनत्रय को रत्नत्रय ।।
धवल विमल यश गुण को गाता, श्वेत छत्र शोभाधारी ।
लोकत्रय प्रभुता प्रकटाता, ताप निवारक मनहारी ।।31।।

चमर प्रातिहार्य

चौसठ चंचल चारु चमर चल, चम–चम चमके चिद् प्यारे ।
नीचे झुककर ऊपर उठते, विनय पाठ उर में धारे ।।
इसी बहाने बोल रहे हैं, झुकना ऊपर जाना है ।
तीर्थंकर के पद में झुकना, ऊर्ध्वलोक को पाना है ।।32।।

दिव्य ध्वनि

जिन भगवन के पद्मानन से, दिव्य ध्वनि निःसृत होती ।
भव्य जनों के श्रवण द्वार जा, मोह मिमिर को वह खोती ।।
तत्त्व बोधनी दिव्यदेशना, मंगलमय वह जिनवाणी ।
भक्ति भाव से महा चाव से, सुने विश्व के सब प्राणी ।।33।।

भामण्डल

भय ना दिखते भव दिखते हैं, प्रभु तेरे भामण्डल में ।
निसर्ग निर्भय होते भविजन नहि भटकें भव जंगल में ।।
परमौदारिक तन से निःसृत, विशुद्ध आभा चक्र रहा ।
दुर्जय मोह चक्र को जीते, जिनवर ऊर्जा चक्र अहा ।।34।।

आलोचना

किसको बीती बात सुनाऊँ, सुनकर लोग हसेंगे ही ।
तथा सरलता को छलकर के, मम उपहास करेंगे ही ।।
बिन बोले ही बोल रहा मन, मैंने जो–जो पाप किए ।
हे सर्वज्ञ आप ही जानो, हम तो कह निष्पाप हुए ।।35।।

इष्ट राह

यदि तुममें कुछ अतिशय भगवन्! इतना अतिशय कर देना ।
निर्मल रत्नत्रय की सरिता, मेरे उर में भर देना ।।
और नहीं कुछ चाहूँ तुमसे, केवल इतनी चाह रही ।
दिखा सको तो दिखाना भगवन्! मोक्ष महल की राह सही ।।36।।

परम गुरु अर्हन्त देव

तव समवशरण विद्यालय में, विद्या पाने शिशु आया है ।
तुम परम गुरु अर्हन्तदेव, मैंने गुणगौरव गाया है ।।
मैं सत्य वचन कहता स्वामी, तुम ही गुरुवर हो अन्य नहीं ।
जिसके जीवन में गुरु नहीं, उसका जीवन भी शुरू नहीं ।।37।।

गुरु–विनय

निज गुरु बनाया है तुमको, अब तुम ही शिवपथ दरशाओ ।
विद्या का अक्षर सिखा–सिखा, अक्षर –अक्षय गुण प्रकटाओ ।।
मैं अक्षरहीन निरक्षर हूँ, तुम ही साक्षर हो, शाश्वत हो ।
अक्षय –निधि निज की मैं पाऊँ, हे ! गुरुवर तुम गुण भास्वत हो ।।38।।

निमित्त नैमित्तकभाव

मेरे भावों में तुम निमित्त, नैमेत्तिक भाव हमारा है ।
तुम–सा निमित्त पाकर हमने, यह जीवन आज सँवारा है ।।
ज्यों चन्द्रकांत का उपादान, मणि चन्द्रकान्त में होता है ।
पर चन्द्रोदय के बिना कभी, क्या मणि शीतलता देता है ।।39।।

जिनवर दर्शन

चित्ताकर्षक मुखमण्डल है, जो करता दूर अमंगल को ।
तन–मन मंगलमय कर देता, भर देता जग जन मंगल को ।।
मंगलमूरत, मंगलसूरत, मंगलकाया, मंगलछाया ।
हो गया वही मंगलकारी, जिसने जिनवर दर्शन पाया ।।40।।

ऊँकार महिमा

हे सौम्यमूर्ति, ओंकारमयी, ओंकारमयी तेरी वाणी ।
तुम ओम् मन्त्र में समा गये, अतएव जपैं निशदिन प्राणी ।।
जप ओम् मन्त्र की जाप सदा, हम पंच परमपद भज लेते ।
जप से ही जन्म–मरण छूटे, अरु पंच पाप को तज देते ।।41।।

सर्वज्ञता

हे विश्व–बोध–धारी जिनवर! तुम ही सद्बोध प्रदाता हो ।
मानव–जीवन का सार बोध, तुम बोध सार के ज्ञाता हो ।।
मैं सुध–बुध खोकर बैठा हूँ, जिन! आतम बोध जगा देना ।
दो बोधिलाभ भगवान् मुझे, जिन! निज सम आप बना लेना ।।42।।

विश्व शान्ति विधायक

जब तन अशान्त मन भ्रान्त हुआ, दर–दर अटका, दर–दर भटका ।
जब शान्ति मिली ना मुझे कहीं, तब द्वार तुम्हारा आ खटका ।।
तुम शान्त रूप, तुम शान्ति भूप, हो शान्ति विधायक शान्तमयी ।
मैं शान्तिनाथ गुण गान करूँ, संस्तुति करता वसुकर्मक्षयी ।।43।।

तप की महिमा

तन तपा चेतना पुष्ट हुई, तप बल से पौरुष बल जागा ।
तब आत्म शक्ति संतुष्ट हुई, जब मोह पराजित हो भागा ।।
तप ने तन कुन्दन बना दिया, तप ने चन्दन सा महकाया ।
चेतन ने तन को भिन्न किया, फिर सिद्ध शिला को है पाया ।।44।।

मोक्ष वरद!

मैं नहीं चाहता नवजीवन, मैं नहीं माँगता, धन–बल दो ।
हर श्वाँस –श्वाँस में भक्ति रहे, नित णमोकार का सम्बल दो ।।
मैं नहीं कामनाएँ करता, निष्काम प्रभो! निष्काम करो ।
दो मोक्ष वरद वरदान हमें, अविराम हमें शिवधाम धरो ।।45।।

सम्यक् याचना

ये सच है आप नहीं बोले, क्या बोल नहीं मेरे खोले ?
शिवपुर के द्वारे बन्द सभी, हे नाथ! आपने ही खोले ।।
मैं नहीं चाहता बहु विद्या, ना जड़ वैभव का आगम दो ।
दो बोधि समाधि लाभ मुझे, हे प्रभुवर! सन्त समागम दो ।।46।।

इष्ट चाह

हम चिन्तामणि क्यों चाहेंगे ? चिन्तामणि तो बस पत्थर है ।
हम कल्पवृक्ष क्यों चाहेंगे ? वह कल्पवृक्ष तो तरुवर है ।।
हम कामधेनु क्यों मागेंगे ? वह पशु पर्याय निशानी है ।
हम माँग रहे जिन! वाणी दो, जो त्रिभुवन की कल्याणी है ।।47।।

प्रतिज्ञा

मैं आज यहाँ कल कहाँ रहूँ, मेरा मुझको कुछ पता नहीं ।
पर एक बात मेरी मानो, तुम नहीं छोड़ना मुझे कहीं ।।
हे नाथ! आपके दर्शनकर, सम्यग्दर्शन ले जाता हूँ ।
बस तुम ही देव हमारे हो, मैं एक वचन दे जाता हूँ ।।48।।

दोहा – भक्ति भाव से यह रचा, श्री जिनवर संस्तोत्र ।
परम विशुद्धि प्राप्त हो, मिलें शान्ति के स्रोत ।।

अकलंक स्तोत्र

पद्यानुवाद– आचार्य श्री विभव सागर जी

जिनके द्वारा निज कर तल में , त्रय रेखायें अंगुलि सम ।
लोकत्रय कालत्रय वर्ती, भाव झलकते प्रत्यक्षम् ।।
राग द्वेष भय मरणादि से, नहीं उलांघा जो जाता ।
महादेव वह मेरे द्वारा, वन्दन सदा किया जाता ।।

जिसने काम अग्नि बाणों से, लोकत्रय को जला दिया ।
नाच रहा जो श्मशानों में, और पुत्र उत्पन्न किया ।।
वह कैसे शंकर हो मेरा, किन्तु मोह जो शमन करे ।
प्राणी मात्र को शान्ति प्रदायक, उन शंकर को नमन करें ।।

नख प्रहार के द्वारा जिसने, दैत्यराज को चीर दिया ।
युद्ध भूमि में बना सारथी, कौरव दल को मार दिया ।।
वह कैसे विष्णु हो मेरा, जान सके जो लोकत्रय ।
महाविष्णु वह मेरे द्वारा, पूज्यनीय है कालत्रय ।।

जिसने लख उर्वशी अंगना, राग भाव को जगा लिया ।
पात्री दण्ड कमण्डलु आदिक, बता रहे अयथार्थ क्रिया ।।
वह ब्रह्मा कैसे हो मेरा, किन्तु क्षुधादिक दोष रहित ।
सच्चा ब्रह्मा वही हमारा, उसे नमन हो भाव सहित ।।

मत्स्य माँस को जो खाता हो, और जीव को शून्य कहे।
कर्म करैया फल न भोगे, ऐसे मिथ्या वचन कहे ।।
क्षणिक ज्ञान धारी बनता है, वह क्या बुद्ध कहायेगा।
लोकत्रय कालत्रय ज्ञाता, मेरा बुद्ध कहायेगा ।।

यदि ईश तो छिन्न लिंग क्यों ? निर्भय तो क्यों शस्त्र धरे।
यदि नाथ क्यों भिक्षा माँगे ? साधु तो क्यों वधु अरे ।।
पुत्र वन्त हो सकता कैसे, यदि अजन्मा आद्रज क्यों।
कौन विवेकी उसको पूजे, लक्षण जिसमें ऐसे हों ।।

ब्रह्मचर्य धर अक्षमाल रख, चित्त रमा में डुला रहे।
महादेव सोये पलंग पर, पार्वती मन लुभा रहे ।।
चक्रेश्वर होकर जो विष्णु, राधा के सह रमण करें।
राग विनाशी भवभयनाशी, वीतराग की शरण वरे ।।

शिवजी ! नाचे दिग्मण्डल में सहस भुजा फैलाकर के।
विष्णु सोते शेषनाग पर, मुँह भी सदा खुला रखते ।।
ब्रह्मा चतुर्मुखी बनकर के, तिलोत्तमा को देख रहा।
ऐसे देव मोक्ष दिखलाये, बहुत बड़ा आश्चर्य अहा ।।

ज्ञेय विश्व को जान रहा जो, भव सागर के पार गया।
अनुपमेय निर्दोष वचन से, जिनवाणी का सार कहा ।।
वीतराग सर्वज्ञ हितैषी, साधु वंद्य वन्दूँ सिर धर।
ब्रह्मा विष्णु बुद्ध महेश्वर या कहलावें तीर्थंकर ।।

माया जटा मुकुट ना जिसके, शशि मुर्धावलि अस्त्र नहीं।
सर्प धनुष त्रयशूल न जिनके, मुख मण्डल न भयावही ।।
कामकामिनी वृषभ नहीं है, नृत्य गीत वादित्र नहीं।
वही निरंजन सूक्ष्म जिनेश्वर, रक्षक हो त्रैलोक्य मही ।।

हे वादिगण! आप जगत् को, ब्रह्म व्याप्त भुवि न देखो।
हरि शम्भु मुद्रा व्याप्त न, रवि शशि व्याप्त नहीं देखो ।।
इन्द्र वज्र गजमुख बौद्धाग्नि, यक्ष नाग से व्याप्त नहीं।
अहो वादियो जग को देखो, जैन दिगम्बर मुद्रित ही ।।

मौजी बन्धन दण्ड कमण्डलु ये, ब्रह्मा के चिन्ह नहीं।
जटा कपाल वधु मुकुटायुध, महादेव के चिन्ह नहीं ।।
चक्रादि से विष्णु न जानो, लाल वस्त्र से बौद्ध नहीं।
अहो वादियो जग को देखो, जैन दिगम्बर मुद्रित ही ।।

अहंकार वश किया न मैंने, द्वेषी मन से नहीं किया।
शून्यवाद सुन भृष्ट हुए जो, उन पर करुणा भाव किया ।।
हिम शीतल की सभा में जीता, ज्ञान मदी उन बौद्धों को।
फोड़ दिया घट स्वयं पैर से, दर्शाया है जिनमत को ।।

हाथों में हथियार न जिसके, मुण्ड माल न लटक रही।
भस्म लपेटे जो न तन पर, शूल अंगना साथ नहीं ।।
नर कपाल न हाथ में जिसके, अर्द्ध चन्द्र न शिर पर ही।
वृषभ सवारी, सर्प कण्ठ में, इत्यादिक ये चिन्ह नहीं ।।

दोष विनाशक भव भय नाशक ! हे जिनवर त्रैलोक्यपति।
हे देवाधिदेव जिनेश्वर ! करूँ वन्दना नित नत ही ।।

महामुनि! अकलंक देव के, ज्ञानोदधि की लहरों में ।
जिनवाणी आकण्ठ मग्न है, ताराशिर कम्पित करने ।।
कलिकाल में धर्म दिखाया, अकलंक गुरु अकलंक महा।
अपरिमेय महिमा के धारक, शास्त्रार्थों के योग्य कहाँ ।।

जिन को सरस्वती माने जो तारा देवि निश्चय से ।
छह मासों में हुई पराजित अकलंक देव के वचनों से ।।
अज्ञ जनों में गणना पाने, कहीं कुमत में इधर–उधर ।
भटक रही हो मन थिर करने हम ऐसा माने श्रुतधर ।।

समाधि भक्ति

प्रथम अधिकार

तेरी छत्रच्छाया भगवन् ! मेरे शिर पर हो ।
मेरा अन्तिम मरणसमाधि, तेरे दर पर हो ।।

जिनवाणी रसपान करूँ मैं, जिनवर को ध्याऊँ।
आर्यजनों की संगति पाऊँ, व्रत–संयम चाहूँ ।।
गुणीजनों के सद्गुण गाऊँ, जिनवर यह वर दो।
मेरा अन्तिम मरणसमाधि, तेरे दर पर हो ।।1।।

परनिन्दा न मुँह से निकले, मधुर वचन बोलूँ।
हृदय तराजू पर हितकारी, सम्भाषण तौलूँ ।।
आत्म–तत्त्व की रहे भावना, भाव विमल भर दो।
मेरा अन्तिम मरणसमाधि, तेरे दर पर हो ।।2।।

जिनशासन में प्रीति बढ़ाऊँ, मिथ्यापथ छोड़ूँ ।
निष्कलंक चैतन्य भावना, जिनमत से जोड़ूँ ।।
जन्म– जन्म में जैनधर्म, यह मिले कृपा कर दो।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।3।।

मरण समय गुरु–पादमूल हो, सन्त समूह रहे ।
जिनालयों में जिनवाणी की, गंगा नित्य बहे ।।
भव-भव में सन्यास मरण हो, नाथ हाथ धर दो।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।4।।

बाल्यकाल से अब तक मैंने, जो सेवा की हो ।
देना चाहो प्रभो ! आप तो, बस इतना फल दो ।।
श्वास –श्वास, अन्तिम श्वासों में, णमोकार भर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।5।।

विषय कषायों को मैं त्यागूँ, तजूँ परिग्रह को ।
मोक्षमार्ग पर बढ़ता जाऊँ, नाथ अनुग्रह हो ।।
तन पिंजर से मुझे निकालो, सिद्धालय घर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।6।।

भद्रबाहु सम गुरु हमारे, हमें भद्रता दो ।
रत्नत्रय संयम की शुचिता, हृदय सरलता दो ।।
चन्द्रगुप्त सी गुरु सेवा का, पाठ हृदय भर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।7।।

अशुभ न सोचूँ, अशुभ न चाहूँ, अशुभ नहीं देखूँ ।
अशुभ सुनूँ ना, अशुभ कहूँ ना, अशुभ नहीं लेखूँ ।।
शुभ चर्या हो, शुभ क्रिया हो, शुद्ध भाव भर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।8।।

तेरे चरण कमल द्वय, जिनवर ! रहे हृदय मेरे ।
मेरा हृदय रहे सदा ही, चरणों में तेरे ।।
पण्डित – पण्डित मरण हो मेरा, ऐसा अवसर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।9।।

मैंने जो जो पाप किए हों, वह सब माफ करो ।
खड़ा अदालत में हूँ स्वामी, अब इंसाफ करो ।।
मेरे अपराधों को गुरुवर, आज क्षमा कर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।10।।

दुःख नाश हों, कर्म नाश हों, बोधि– लाभ वर दो ।
जिन गुण से प्रभु आप भरे हो, वह मुझमें भर दो ।।
यही प्रार्थना, यही भावना, पूर्ण आप कर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।11।।

समाधि भक्ति
द्वितीय अधिकार

अहो अकिंचन मैं हूँ मेरा, इस जग में क्या है ?
मेरे गुण तो मेरे भीतर, बाहर में क्या है ।
यह रहस्य परमात्मकला का, पूर्ण उजागर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।1।।

मैं पवित्र हूँ मैं प्रसन्न हूँ, पूर्ण स्वस्थ हूँ मैं ।
ज्ञानवान हूँ ध्यानवान हूँ, आत्मस्थ हूँ मैं ।।
आत्मक्रिया चिन्तन मन्थन में, निज मन तत्पर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।2।।

शील सहित नर भी मरता है, शील रहित मरता ।
धैर्य सहित नर भी मरता है, धैर्य रहित मरता ।।
शील सहित हो धैर्य सहित हो, वह समाधि वर दो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।3।।

ज्ञान भावना दर्श भावना, चरित भावना हो ।
ये तीनों तो आत्मरूप हैं, आत्मभावना हो ।।
रत्नत्रय की बहे त्रिवेणी, प्रतिपल संवर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।4।।

अरिहंतों को नमन हमारा, सिद्ध नमन मेरा ।
सूरि पाठक साधुजनों को, नित्य नमन मेरा ।।
पंच परम परमेष्ठी हमारे, पंच पाप हरलो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।5।।

अरिहंतों का पहला मंगल, सिद्धों का दूजा ।
साधुजनों का तीजा मंगल, धर्म कहा चौथा ।।
चारों मंगल मेरा जीवन, मंगलमय कर दो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।6।।

अरिहंतों का पहला उत्तम, सिद्धों का दूजा ।
साधुजनों का तीजा उत्तम, धर्म कहा चौथा ।।
चारों उत्तम मेरा जीवन, सर्वोत्तम कर दो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।7।।

अरिहंतों की पहली शरणा, सिद्धों की दूजी ।
साधुजनों की तीजी शरणा, धर्म शरण चौथी ।।
चारों शरणा भय दुःख हरणा, मुझे शरण रखलो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।8।।

गुरु से मुझको मिला है कितना , क्यों इतना सोचूँ ।
मैंने कितना किया समर्पण, बस इतना सोचूँ ।।
सेवा और समर्पण प्रतिपल, बढ़ते क्रम पर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।9।।

संयम भाव जगाना गुरुवर ! काम तुम्हारा है ।
संयम पालन करना गुरुवर ! काम हमारा है ।।
अब तो प्रतिपल प्रतिपग मेरा, संयम पथ पर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ।।10।।

संयम पथ निर्बाध बनाओ, मेरे गुरुवर जी ।
मोक्षमहल तक साथ निभाओ, मेरे प्रभुवर जी ।।
उपसर्गों में बाधाओं में, कभी नहीं डर हो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि तेरे दर पर हो ।।11।।

समाधि भक्ति
तृतीय अधिकार

बिन भोगे ही भव भोगों को, त्यागा धन्य वही ।
भोग बुरे लख जिनने त्यागे, वे सब धन्य मही ॥
मोह रहित जप ज्ञान सहित तप, त्याग निरन्तर हो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि तेरे दर पर हो ॥1॥

भव–भव में मुनिराज बनूँ मैं, यही भावना है ।
भव–भव में जिनधर्म गहूँ मैं, यही भावना है ॥
बाल ब्रह्मचारी मुनि होऊँ, रत्नत्रय वर दो ॥
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ॥2॥

मैं तप धारूँ मैं श्रुत धारूँ, सम्यक व्रत धारूँ ।
धर्मध्यान में रत होकर के, शुक्ल ध्यान धारूँ ॥
शुक्ल ध्यान में कर्म जलाऊँ, जाना शिवपुर हो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ॥3॥

मैं कैसा हूँ केवलज्ञानी !, जैसा तुम जानो ।
मैं वैसा हूँ अंतर्यामी !, जैसा तुम मानो ॥
वीतराग सर्वज्ञ हितैषी, तुम अविनश्वर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ॥4॥

उत्तम त्यागी वे हैं जिनने, अर्जन नहीं किया ।
मध्यम त्यागी वे हैं जिनने, अर्जित त्याग किया ॥
जघन्य त्यागी सौंप संपदा, सन्त दिगम्बर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ॥5॥

भव अनन्त के भ्रमण चक्र को, आज रोकता हूँ ।
देव शास्त्र गुरुवर के चरणों, माथ टेकता हूँ ॥
अब निर्दोष तपस्या का फल, सिद्ध परम पद हो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ॥6॥

ना जाने कब तेरे दर से, चलना हो जाये ।
किस विधि फिर से दर्शन पाना, दुर्लभ हो जाये ॥
उत्तमार्थ प्रतिकर्म करूँ मैं, सर्व दोष हर लो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि तेरे दर पर हो ॥7॥

चन्द्रप्रभ भगवान हमारे, हमको चारित दो ।
चरण कमल की करूँ वन्दना, मन पवित्र कर दो ॥
श्री सम्मेद शिखर का दर्शन, हमको फिर–फिर हो ।
मेरा अंतिम मरण समाधि तेरे दर पर हो ॥8॥

नंदीश्वर के दर्शन पाऊँ, पंचमेरु जाऊँ ।
श्री विदेह में तीर्थंकर के, समवशरण जाऊँ ॥
उड़ जाऊँ निर्वाण लक्ष्य तक, प्रभुवर वह पर दो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ॥9॥

एक मात्र जिनभक्ति आपकी, है समर्थशाली ।
दुर्गति रोधक सन्मति बोधक, महापुण्यशाली ॥
शाश्वत मोक्ष महल की चाबी, संस्तुति जिनवर हो ।
मेरा अन्तिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो ॥10॥

श्री 1008 चिंतामणि
पार्श्वनाथ भगवान
श्री दि. जैन गौराबाई मंदिर,
सागर

श्री 1008 भगवान
महावीर स्वामी जी
श्री दि. जैन चंद्रप्रभु मंदिर
(सिंघईजी), सागर

सौभाग्य : जैन चश्मा घर, सागर एवं वीर प्रिंटिंग प्रेस, अशोकनगर

सारस्वत श्रमण नय चक्रवर्ती श्रमणाचार्य
108 श्री विभवसागर जी महाराज

पूर्व नाम	पण्डित अशोक कुमार जी जैन शास्त्री
जन्मस्थान	किसनपुरा (सागर) म.प्र.
जन्मतिथि	कार्तिक कृष्ण अमावस्या 2033 तदनुकूल 23 अक्टूबर 1976
पिता	श्रावकरत्न श्री लखमीचन्द्र जैन
माता	श्राविकारत्न श्रीमती गुलाबबाई जैन
शिक्षा	संस्कृत शास्त्री प्रथम वर्ष (इण्टर)
धार्मिक शिक्षा	धर्मशास्त्री द्वितीय वर्ष
शिक्षण संस्थान	श्री गणेशवर्णी दिगम्बर जैन महाविद्यालय मोराजी सागर म.प्र.
वैराग्य	9 अक्टूबर 1994 को ब्र. व्रत लिया
क्षु. दीक्षा	28 जनवरी 1995 मंगलगिरि सागर म.प्र.
ऐलक दीक्षा	23 फरवरी 1998 देवेन्द्रनगर (पन्ना) म.प्र.
मुनि दीक्षा	14 दिसंबर 1998 अतिशय क्षेत्र बरासौ भिण्ड म.प्र.
दीक्षा गुरु	गणाचार्य 108 श्री विरागसागर जी महाराज
आचार्य पद	31 मार्च 2007 औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
विशेष	जैन आगम रुपी मानसरोवर के राजहंस की तरह झलक देने वाले प्रज्ञाश्रमण की प्रवचन शैली जन-जन द्वारा हृदयग्राहा है।
कृतियाँ	अभी तक आचार्य श्री द्वारा 62 कृतियों की सृजना की गई है।
अलंकरण	'' सारस्वत-श्रमण '', '' सारस्वत-कवि '' एवं '' शास्त्र-कवि ''

मुद्रक : वीर प्रिंटिंग प्रेस, अशोक नगर. मो. 8989456097